Chapter-6

षष्ठ परिच्छेद

नयी कविता : भाषा की ध्वनन एवं द्योतन शक्ति

ध्वनि शब्द प्राय: व्यंजक शब्द, व्यंजक अर्थ, व्यंग्यार्थ, व्यंजना-व्यापार एवं व्यंग्यात्मक काव्य के लिए प्रयुक्त होता है। जिस प्रकार चने के बीज में बीजत्व शक्ति विद्यमान होती है, उसी प्रकार शब्दों के अन्तस् में ध्वनन एवं द्योतन शक्ति विद्यमान होती है। ध्वनि सिद्धान्त का मूल ~~शब्द~~ मूल तत्व वैयाकरणों का स्फोटवाद है, उनका कहना है कि जिस प्रकार अरणि में ज्योति विद्यमान होती है[1] उसी प्रकार प्रत्येक शब्द के हृदय में ध्वनन एवं द्योतन शक्ति विद्यमान होती है। शब्द सार्थक एवं नित्य होता है[2] भर्तृहरि का कहना है कि अकेला शब्द ही सम्पूर्ण वाक्य का अर्थ बोध करवाने में समर्थ हो सकता है।[3] भामह का कहना है कि जिस तरह माली, यह सुगंधित फूल है अत: ग्राह्य है, यह सुगंधित नहीं है अत: त्याज्य है, इस प्रकार सुगंधित फूलों को ही धागे में पिरोता है, उसी प्रकार कवि भी शब्दों को अभिव्यंजना के कोमल तंतुओं में बांधता है।[4] कवि एक- एक शब्द को ईंटों की तरह तराश-तराश कर फिट करता है, जब तक शब्द मजबूत एवं सार्थक नहीं होते, तब तक कविता में अर्थ गौरस्य एवं जादुईपन नहीं आता। भामह का कहना है - कुशल कवि के द्वारा शब्द के सन्निवेश से कविता में दोष भी गुण बन जाया करते हैं। जिस प्रकार हरे-भरे पत्तों से युक्त पलाश पुष्पों की माला और सुन्दर रमणी के आंखों में काजल।[5] इसीलिए वैयाकरण शब्दों को काट-छांट कर इस क्रम से फिट करना चाहता है कि जिससे मात्रा की बचत हो, आधी मात्रा के कम हो जाने पर ~~इसक~~ वैयाकरण वैसा ही उत्सव मनाता है जैसा कि पुत्र के पैदा होने पर मनाया जाता है - `अर्द्धमात्रा लाघवेन पुत्रोत्सवं मन्यते वैयाकरणा: ।` शब्दों के निरन्तर प्रयोग से द्योतन शक्ति उसी प्रकार नष्ट हो जाती है जिस प्रकार बीज के मसल दिए जाने पर

उसकी बीजत्व शक्ति । शब्द वही रहते हैं परन्तु अर्थ घिसकर अपनी द्योतन शक्ति खो देते हैं । अथवा एक साथ कई अर्थों के संवाहक बन जाते हैं । जिस प्रकार बासन अधिक घिसने से उसकी कलई उतर जाती है उसी प्रकार शब्दों का मुलम्मा छूट जाता है, साख मर जाती है, जिससे शब्द निर्जीव एवं चिपटे प्रतीत होते हैं । नयी कविता में इन्हीं निर्जीव शब्दों को लेकर भारी हो-हल्ला हुआ । 'चालू' शब्दों से चिढ़कर भाषा को पेशेवर[६] एवं वेश्या[७] कहा गया । इन कवियों ने भोगी हुई संज्ञाओं[८] और क्रियाओं से चिढ़कर नयी अर्थवान भाषा खोजने का प्रयास किया । कवि अपनी पैनी निगाह से इन्हीं भोगे हुए निर्जीव शब्दों को तराश-तराश कर अर्थवान बनाता है । नये संदर्भों के अनुसार नये संस्कार का जामा पहनाता है । कवि अपनी प्रतिभा एवं संवेदन शक्ति द्वारा इन्हीं शब्दों को सूक्ष्म अनुभूति से गर्भित कर ऐसी क्षमता प्रदान कर देता है कि वह सहृदय व्यक्ति की संवेदना को उद्बुद्ध कर सकें । उसके हृदय में समान अनुभूति का संचार कर सके । शब्द और अर्थ जब व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध एवं निर्दोष होंगे तभी कविता में निखार एवं चटक आयेगी ।

पंत ने कविता के जिस राग तत्व की परिकल्पना की थी, वह यही राग है और यही कविता का प्राण तत्व है । 'कविता की भाषा का प्राण राग है। राग का अर्थ आकर्षण है । राग के ही द्वारा कविता सान्त को अनन्त से मिलाती है । कविता की भाषा की लय उसमें विभिन्न प्रकार के मनोभावों को व्यक्त करने की क्षमता भर देती है ।[९] उनके अनुसार 'कविता में शब्द तथा अर्थ की अपनी स्वतंत्र सत्ता नहीं होती वे दोनों भाव की अभिव्यक्ति में डूब जाते हैं ।[१०] तभी अर्थ का रागात्मक सम्बन्ध स्थापित होता है । वे दोनों आपस में घुल-मिलकर उसी तरह काव्य में परिणत हो जाते हैं जिस तरह कच्चा आम बानगी फेरकर मधुरता में परिणत हो जाता है । ध्वनिकार

का कहना है कि सच्ची कविता वही है जिसमें ध्वनन एवं द्योतन शक्ति विद्यमान होती है और इसी कारण पदों के स्मारक होते हुए भी केवल पदों से प्रकाशित होने वाली ध्वनि के साथ-साथ उसके भेदों में चारुत्व एवं रमणीयता होती है। जिस प्रकार विच्छित्ति के द्वारा शोभित होनेवाले एक ही आभूषण से कामिनी सुन्दर लगती है उसी प्रकार पद के द्वारा द्योत्य-ध्वनि से अच्छे कवि की भाषा सुशोभित होती है।[११]

'शब्द और अर्थ यद्यपि सर्वत्र एक ही है किन्तु महाकवियों ने जिन शब्दों और अर्थों में अपना हृदय अभिव्यक्त किया है उनकी पहचान सहृदयता की सबसे बड़ी पहचान है।[१२] प्रसिद्ध शायर अकबर ने ठीक ही कहा है कि 'इश्क को दिल में दे जगह अकबर। इल्म से शायरी नहीं आती।' कवि कर्म के मामले में सर्वेश्वर सजग हैं --

आग मेरी धमनियों में जलती है
पर शब्दों में नहीं ढल पाती,
मुझे एक चाकू दो
मैं अपनी रगें काटकर दिखा सकता हूं
कि कविता कहां है ?[१३]

इस कथन से ही साफ है कि कविता का उतना ही महत्व है जितना कि जीवन का। कविता की भाषा में भंकृत होने वाले बहुत सारे शब्दार्थ सम्बंधों का सन्दर्भ सामने रहता है। सच्चा काव्यार्थ बाण की तरह सीधा होता है।[१४] ध्वनिकार आनन्दवर्द्धन ने बाल्मीकि के शोक की श्लोक रूप में परिणति का उदाहरणदेकर यह चैलेंज किया कि प्रतीयमान अर्थ ही काव्य की आत्मा है।[१५]

वह स्व-संवेदन सिद्ध है। -`मा - - निषाद - प्रतिष्ठाम् त्वमगम: शाश्वती समा:` में `म` की बार-म्बार आवृत्ति एवं `म` के पहले आ जाने से भाषा में निखार आ जाता है। यही उत्तम काव्य का निकष होता है। यदि हम नयी कविता को इसी कसौटी पर परखें तो अधिकांश कवियों को कुंठला पाना असम्भव है। अज्ञेय से लेकर रघुवीर सहाय, सर्वेश्वर, गिरिजाकुमार माथुर, धूमिल, जगूड़ी आदि कवियों में यह प्रेक्षणशीलता बिम्ब- प्रतिबिम्ब मात्र से विद्यमान है, - लो और तेज हो गया उनका रोजगार। जो कहते थे बिना पैसे के उतार देंगे पार, सुनो- सुनो जब मैं किसी को आवाज देता हूं। वह चीखकर भाग जाता है, हाय-हाय, मैंने उन्हें देख दिया नंगा। इसकी मुझे और सजा मिलेगी, लो यह रहा तुम्हारा चेहरा। जुलूस के पीछे गिर पड़ा था। लो, सुनो-सुनो और हाय-हाय में जैसे कोई बुलाकर कह रहा हो, पूछ रहा हो, उलाहना दे रहा है, इसमें वही द्योतन शक्ति मौजूद है जो आदि कवि बाल्मीकि के मा निषाद - - - में। `गाली गला भींच आकाश वाणी. अन्त में `टड़ंग`, में अकेला `टड़ंग` शब्द की पूरे वाक्य में सार्थक और सही झंकार देने की क्षमता रखता है।

कवि अपने सोच और अनुभव को अभिव्यंजना के कोमल तंतुओं में बांधने के पहले यह विचार करता है कि शब्दों को किस तरह फिट किया जाय जो सार्थक हों और वीणा की तरह झंकृत हों। कविता में गुंथे हुए शब्द जानदार होते हैं और उन शब्दों के अन्तस् में विद्यमान अर्थ तत्व अनुरणित होते हैं, इन्हीं अर्थ तत्वों के अनुरणित होने से काव्य भाषा का ध्वनि सौंदर्य उसी प्रकार खिल उठता है जिस प्रकार फूलों के गुच्छों से लदी हुई टहनियां। ध्वनि का र का कहना है कि ये अर्थ छवियां काव्य की शोभा का आधायक उसी प्रकार होती है, जिस प्रकार दीपशिखा और उससे निस्सृत प्रकाश की जगमगाहट।

जिस प्रकार कोई सुन्दर रमणी लज्जा से अपने मुख को छिपा लेती है, उसी प्रकार से अर्थ छवियां मुख से निस्सृत लज्जा के समान काव्य भाषा के सौन्दर्य को आलोकित करती हैं।[१६] ध्वनि सौन्दर्य के साथ-साथ काव्य भाषा को आकर्षक बनाने में अर्थ सघनता, व्यंजकता तथा प्रेषणशीलता भी आवश्यक है। अर्थ व्यंजकता ही भाषिक चित्रात्मकता का प्राण है। निराला ने इसी भाषा को अर्थ बिम्बों और प्रतीकों में छिपती कहकर काव्य भाषा की चित्रविधायिनी शक्ति को उजागर करने का प्रयास किया था।[१७] काव्य भाषा में सामान्य अर्थ लज्जाधिक्य के कारण भौंहों का भाषा कार्य तथा इस भाषिक चित्र मौन संकेत[१८] को रिचार्ड्स ने अति महत्व का बताया है। अज्ञेय ने भी अर्थ- गर्भ- मौन के द्वारा सम्प्रेषण को श्रेष्ठ बताते हुए कहा है कि 'कवि शब्दों का न केवल भरपूर उपयोग करता है, बल्कि कभी- कभी शब्दों या वर्णों का उपयोग न करके ही अर्थ की वृद्धि करता है।[१९] ध्वनि सौन्दर्य के सन्दर्भ में उद्धृत अज्ञेय की 'पावस प्रात: शिलङ्' शीर्षक कविता उपर्युक्त विशेषताओं की दृष्टि से उल्लेख्य है —

भोर बेला। सिंची छत से ओस की तिप्-तिप् ।
पहाड़ी काक
की बिजन को पकड़ती सी क्लान्त बेसुर डाक-
'हाक्। हाक्। हाक् ।
मत संजो यह स्निग्ध सपनों का अलस सोना-
रहेगी बस एक मुट्ठी खाक
थाक्। थाक्। थाक् ।[२०]

प्रस्तुत कविता में 'तिप्-तिप्', डाक्, खाक् और 'थाक्' विशिष्ट ध्वनि सौन्दर्य

उत्पन्न करते हैं। लय में शब्दों के संगीत और सम्पृक्तार्थ का अनुस्यूत होना आवश्यक है।[२१] विचारों और भावों के चेतन स्तर से बहुत गहरे उतर कर प्राचीन और नवीन प्रयोगों में सामंजस्य स्थापित करके शब्दों को इस रूप में अनुप्राणित करना चाहिए कि पाठक को सामान्य अर्थ से परे नया अर्थ ग्रहण करने के लिए संवेदनशील बना सके। टी० एस० इलियट ने इसे श्रोत कल्पना (आडिटरी इमैजिनेशन) की संज्ञा दी है।[२२] तथा शब्द ध्वनि एवं उससे उत्पन्न संगीत को विशेष महत्व का बताया है। अज्ञेय की 'असाध्य वीणा' शीर्षक कविता इस सन्दर्भ में विशेष महत्वपूर्ण है ---

'हां मुझे स्मरण है :
बदली-कौंच-पत्तियों पर वर्षा-बूंदों की पट-पट
घनीरात में महुए का चुप-चाप टपकना।
चौंके खग-शावक की चिहुंक
+ + +
पर्वती गांव के उत्सव- ढोलक की थाप
गड़रिए की अनमनी बांसुरी।
कठफोड़ का ठेका। फुल सुंघनी की आतुर फुरकन :
ओस-बूंद की ढरकन-इतनी कोमल, तरल कि झरते-झरते
मानो। हर सिंगार का फूल बन गयी।
+ + + +
भिल्ली-दादुर कोकिल-चातक की झंकार पुकारों की
यति में। संसृति की सायं-सायं।[२३]

अज्ञेय की ये पंक्तियां आंखों से अधिक कानों को प्रभावित करती हैं। विभिन्न दृश्यों एवं चित्रों का अपना अलग-अलग सौन्दर्य एवं अपनी अलग-अलग लय है। ये

पंक्तियाँ जीवन के विविध पक्षों में निहित लयात्मक सौन्दर्य का उद्घाटन करती हैं। नयी कविता के इन ध्वन्यात्मक शब्दों के साहचर्य से व्यंजना भी परिलक्षित होती है।

किन्तु मैं हारा नहीं हूं। फड़फड़ाती हैं, अभी बाहें
कि अपने मार्ग के सारे अवरोध तोड़ दूं[२४]

यहां फड़फड़ाना शब्द ध्वन्यात्मक है। दृगभर। समेट तो लो यह श्री यह कान्ति बही आती दिगन्त से यह कवि की सरिता अमन्द भर-भर-भर भर[२५] गिरिजाकुमार माथुर ने सूखे पत्तों की ध्वनि को शब्द दिए हैं - कभी- कभी बस। पतझर का सूखा पत्ता गिर कर उड़ जाता। मेरे स्वरों में खर-खर-खर करता।[२६] डा० जगदीश गुप्त की थाह कविता में पत्थर के तल में डूबने की ध्वनि व्यंजित है - अंधेरा घुप। ताल का तट चुप। एक कंकड़ डुप। दूसरा डुप।। तीसरा डुप।।[२७] इस प्रकार प्रभाकर माचवे, सर्वेश्वर तथा जगदीश गुप्त ने ध्वनि सौन्दर्य को उभारने का विशेष प्रयास किया है। ध्वनि, लय, शब्द तथा दृश्य आदि के द्वारा चित्रों को भी संजोया गया है।

भाषा की संवेदनात्मक परिणति :

संवेदना का व्युत्पत्ति मूलक अर्थ है किसी व्यक्ति के दु:ख- दर्द को अपने हृदय में उसी रूप में उतारना, समान अनुभूति का संचार करना। ध्वनिकार के अनुसार सच्चा कवि सहृदय और संवेदनशील होता है।[२८] वह मानव समाज एवं किसी भी प्राणी पर पड़ने वाले दु:ख, दर्द को बड़ी आसानी से झेल लेता है। किसी भी पीड़ित दु:खी व्यक्ति को देखकर आह, ओह, उफ, च: च: इत्यादि शब्द को संवेदनशील कवि अपनी भाषा के माध्यम से सार्थक अभिव्यक्ति देता है। यही प्रसंग जब काव्य भाषा में किसी प्राणी के कारण

प्रसंग को लेकर दुहराया जाता है तो संवेदना का जन्म होता है। ध्वनिकार आनन्दवर्द्धन ने बाल्मीकि के शोक की श्लोक रूप में परिणति का उदाहरण देकर यह घोषणा की है कि प्रतीयमान अर्थ ही काव्य की आत्मा है, वह स्व-संवेदन सिद्ध है। वही सच्चा काव्यार्थ है जो क्रौंच के वियोग को लेकर काव्य में परिणत हुआ। मा निषाद - - - में म, म.. की आवृत्ति से भाषा की संवेदनशीलता में निखार आ जाता है।[29] चोमराज ने भी ध्वनिकार के इस मत को तटस्थ रूप से स्वीकार किया है।[30] संवेदना कवि के द्वारा प्रत्यक्ष अनुभवों का एक डिस्टिल फार्म है। कवि अपनी भोगी हुई अनुभूतियों को उसी रूप में सम्प्रेषित करना चाहता है जिस रूप में उसने भोगा है। जो अनुभव व्यक्तित्व में घुलते हुए अनुभूति के रूप में छनकर आते हैं वही संवेदना के रूप में उभरते हैं।` संवेदन और अनुभूति (सेन्स : फीलिंग) की एक रूपता ये सभी रचना में तनाव की वृद्धि करते हैं।[31] टिलियर्ड के अनुसार `प्रत्येक कवि स्वभाव से ही सामान्य व्यक्ति की अपेक्षा अधिक भावुक होता है। सामान्य पाठक की संवेदनशीलता के स्तर से उच्चस्तर पर अवस्थित कवि अपनी संवेदनशीलता को सम्प्रेषणीय बनाकर पाठक को एक उच्च स्तर संवेदन-शीलता का आस्वाद कराता है।[32] जिस प्रकार पानी में कंकड़ फेंकने से वृत्ताकार रूप में छोटी-छोटी लहरियां बड़ी बनती चली जाती हैं, उसी प्रकार किसी प्राणी के दु:ख दर्द को देखकर उसके भी हृदय में आघात लगता है, और उसके भी करुणा हृदय में लहरें हिलोर लेने लगती हैं। लहरों का विस्तार जितना बड़ा होगा, कवि उतना ही प्रतिभाशाली सिद्ध होगा। भट्ट नायक के अनुसार संवेदना का अर्थ है भावकत्व एवं भोजकत्व द्वारा अर्थ की अभिव्यक्ति। अभिनव गुप्त के मत में संवेदन पद व्यज्यमान होकर व्यंग्य अनुभूति काल में साक्षात्कृत रस का बोधक होता है। ध्वनिकार ने इसे रस ध्वनि का विषय बताया है। खगेन्द्र ठाकुर संवेदना को व्यापकता देते हुए कहते हैं कि `कविता

की भाषा संवेदनात्मक होती है, इस मान्यता के पीछे तर्क यह है कि कविता वास्तव में संवेदना ही है।[33] भाववादी इसे आत्मनिष्ठ मानते हैं और वस्तुवादी इसे वस्तु निष्ठ। नयी कविता में मानव जीवन के दु:ख-दर्द, आशा-निराशा एवं पीड़ा को अभिव्यक्ति मिली है और वह जिस भाषा में मिली है वह संवेदना ही है। नयी कविता के कवियों ने शहर से लेकर गांव तक की वेदना एवं पीड़ा को सच्चाई के साथ समान रूप से अभिव्यक्त किया है। आज का मनुष्य अनेक संकटों एवं संघर्षों से जूझ रहा है। उसकी मन:स्थिति घायल है, उसका व्यक्तित्व खण्डित व्यक्तित्व है। वह किसी के दु:ख - दर्द में भले-हाथ न बटाये परन्तु उसके हृदय में एक टीस तो उभरती ही है —

घर के पिछवाड़े
एक लावारिस औरत
बच्चा देकर मर गयी
मर जाती -
पड़ोसिन ने बच्चे को दूध पिलाया
बस यहीं
मेरा दिमाग-चकराया
जरा दूर चौराहे पर
बस के नीचे मरा आदमी
पड़ोसिन ने कुछ नहीं किया
बस वहीं खड़े लोगों ने थोड़ा
च: च: किया।[34]

सच्चे कवि की यही पहचान है कि वह मानव जीवन के दु:ख-दर्द को

अपने उदर में उसी तरह पचाये जिस तरह शहद की मक्खियां अनेकों किस्म के फूलों का रस अपने उदर में पचाती हैं और फिर उसे उगल कर एक छत्ते का निर्माण करती हैं। कवि भी इसी तरह संवेदनशील होता है।

गोद में बच्चा लिए हुये एक स्त्री चलती हुई बस में चढ़ने का प्रयास करती है उस स्थिति कोदेखकर कवि का हृदय करुणा से भर जाता है। बच्चे को गोदी में लेकर चलती हुई बस में चढ़ना, और वह स्त्री है, यही बात कवि के मन में बार-बार खटकती है और वहीं संवेदना, भाषा के रूप में अभिव्यक्ति पाती है —

बच्चा गोद में लिए
चलती बस में
चढ़ती स्त्री
और मुझमें कुछ दूर तक घिसटता जाता हुआ[35]

आज का कवि समाज को क्या दे सकता है ? उसके पास कुछ भी नहीं है, न वह धनी है, न वह कोई दार्शनिक है, वह सिर्फ एक कवि है उसके पास उसकी संवेदना बचती है —

लोगों मेरे देश के लोगों
मैं सिर्फ एक कवि हूं
मैं तुम्हें रोटी नहीं दे सकता
न उसके साथ खाने के लिए गम
न मैं मिटा सकता हूं ईश्वर के विषय
मैं तुम्हारा संभ्रम ।[36]

नयी कविता में जीवन की अव्यवस्था, आत्मीयता, संवेदना के धरातल पर उभर कर आयी है —

कैसी विचित्र है जिंदगी
जिसे मैं जीता हूं
एक सड़ा कपड़ा जो फटता जाता है
ज्युं- ज्युं सीता हूं
जब भी काढ़ने चलता हूं
कोई सुन्दर फूल
एक पैबन्द लगाता हूं
और इस तरह बनाता जाता हूं
एक लबादा जिसे हर बार ओढ़ने पर थराता हूं
फिर भी ओढ़ता जाता हूं ।[37]

प्रस्तुत कविता में कवि की छटपटाहट और उसकी तड़पन को अभिव्यक्ति मिली है, जब सम्पूर्ण जिन्दगी ही आग हो गयी तो उस स्थिति में फूल कहां इसकी गुंजाइश कहां ? कवि का लबादे का ओढ़ना विवश होकर दुःखमय जीवन का निर्वाह करना, संवेदना की गहराई तक छूता है । कवि जीवन और मृत्यु के बीच कराह रहा है उसकी पीड़ा सुनने वाला कोई नहीं है, और न वह ही किसी की पीड़ा को सुनने में हाकल है । यहां कवि की चीख भाषा नहीं, उसकी वेदना ही भाषा में परिणत हुई है —

सुनो जब मैं किसी को आवाज देता हूं
वह चीख कर भाग जाता है

और जब कोई स्वयं मेरी ओर बढ़ता है
मैं आंखें बंद कर लेता हूं।[३८]

इस प्रकार नयी कविता में मानव जीवन के दुःख-दर्द खीझ, आशा, निराशा, एवं उसकी वेदना को समान रूप से अभिव्यक्ति मिली है। आज का कवि मानव हृदय में सच्ची अनुभूति जगाना चाहता है। कभी- कभी वह जीवन की बिडम्बना एवं विसंगतियों को देखकर खौफनाक हो उठता है, उसके पास कुछ नहीं है, अभिव्यक्ति देने में सबसे बड़ा संकट भाषा का है और इसीलिए वह भाषा को संवेदना के स्तर तक उतारता है, और उसे एक नये तजुर्बे से ढालता है, और उसमें एक नई रवानगी पैदा करता है जो सामान्य व्यक्ति के हृदय तक भी पहुंच सके। श्रीराम वर्मा, जगूड़ी, धूमिल, जगदीश गुप्त, विजयदेव नारायण साही, सुरेन्द्र तिवारी आदि कवियों की भाषा में संवेदना का ही उतार-चढ़ाव परिलक्षित होता है। इन कवियों ने नन्हें-मुन्ने, बच्चों का रसोई घर में रोना, घर की अदनी लाचारी, पत्नी का उदास और पीला चेहरा किसी प्राणी की दयनीय स्थिति का चित्रण करके हृदय के मर्म को छू लिया है जिसमें न कोई बिम्ब है, न प्रतीक है, और न कोई अलंकरण फिर भी वह हृदय को आन्दोलित करने में पूर्णतयः सक्षम है और वही सच्चा काव्यार्थ है —

सिनेमा की एक कड़ी गुनगुनाती हुई
पानी मिला दूध
मुन्नी नाच-नाच पीने लगी।[३९]

प्रस्तुत पंक्तियों में श्रीराम वर्मा ने समाज पर फिल्मी दुनिया की छाप और

गरीब घर के छोटे बच्चे को पानी मिला दूध तथा सामान्य वर्ग की मजबूरियों पर गहरा व्यंग्य किया है। मुन्नी को दूध पीने का शौक है, मां-बाप उसे पर्याप्त दूध देने में समर्थ नहीं हैं परन्तु उसे खुश रखने के लिए दूध में पानी मिलाकर पिलाते हैं। कवि जितना ही समाज से जुड़ता जायेगा भाषा की संवेदना उतनी ही गहरी होती जायेगी।

नयी कविता : भाषा का व्यंग्य एवं व्यंजना व्यापार :

'व्यंग्य' शब्द की व्युत्पत्ति वि+अंग =(व्यंग्य) से हुई है।[40] व्यंग्य का शास्त्रीय अर्थ है, शब्द का व्यंजना वृत्ति के द्वारा प्रकट होनेवाला अर्थ[41]। अंग्रेजी सैटायर के आधार पर किसी व्यक्ति या समाज की बुराई या न्यूनता को सीधे शब्दों में न कहकर उल्टे या टेढ़े शब्दों में भी व्यक्त करता है जो नैतिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक विसंगतियों, अन्तर्विरोधों, मिथ्याचारों, असमंजसों, अन्याय और अविचार आदि को बड़ी गहराई से पकड़ता है। हंसता और मुस्कराता है पर यह हंसी प्रसन्नता की नहीं, कसक की होती है। काव्य-भाषा की उक्ति सामान्य भाषा की अपेक्षा अन्य ही हुआ करती है चाहे वह शब्द की हो या अर्थ की। ध्वनिकार का कहना है कि महाकवियों की वाणी में प्रसिद्धार्थ एवं लोक प्रचलित अर्थ से अतिरिक्त प्रतीयमान अर्थ की झलमलाहट होती है। यह प्रतीयमान अर्थ कुछ और ही होता है जो महाकवियों की वाणी में विद्यमान रहता है। इसी प्रतीयमान अर्थ को ध्वनि कहते हैं। ध्वनि अनुरणन न्याय से जहां अर्थ स्वयं को तथा शब्द अपने अभिधेय अर्थ को गौण करके प्रतीयमान अर्थात् व्यंग्यार्थ को प्रकाशित करता है, उस काव्य विशेष को विद्वानों ने ध्वनि कहा है।[42] मम्मट के अनुसार जहां वाच्य से व्यंग्य की अधिकता होती है उसे ध्वनि एवं व्यंग्य प्रधान काव्य कहते हैं।

यही उत्तम काव्य का निकष होता है।[४३] ध्वनि की सत्ता तभी होती है जब प्रसिद्धार्थ अपनी सत्ता खो देता है अर्थात् वाच्यार्थ के स्थान पर व्यंग्यार्थ की प्रतीति होती है। यह व्यंग्यार्थ उसी प्रकार होता है जैसे किसी सुन्दर रमणी के कपोल, स्तन, जघन इत्यादि अंगों में लावण्य की छटा।[४४] इन दोनों अर्थों में सिर्फ अन्तर इतना ही होता है कि जैसे दीपशिखा और उससे नि:सृत प्रकाश में[४५] तथा रमणी के सुन्दर मुख और उससे नि:सृत लज्जा की आभा में।[४६] मम्मट के अनुसार व्यंग्य प्रधान काव्य किसी सुन्दर कामिनी के कुच-कलश के समान गूढ़ चमत्कृति का आधायक होता है।[४७] व्यंग्य के प्राधान्य अप्रधान्य होने से काव्य का उत्तम, मध्यम, अधम भेद प्रकरण माना जाता है। काव्य में इस प्रतीयमान अर्थ की प्रतीति के कारणभूत व्यापार को व्यंजना व्यापार माना जाता है। व्यंजना शब्दों के साक्षात् संकेत से परे किसी अन्य अर्थ की प्रतीति कराती है। व्यंजना के दो भेद होते हैं शाब्दी व्यंजना और आर्थी व्यंजना। नयी कविता में व्यंजना ही गूढ़ार्थ को प्रकाशित करने में सक्षम हुई है।

> 'कि जब तूफान आया है। हिलोरों ने बुलाया है,
> तुम्हारी नाव क्या तट से बंधी रह जायेगी।[४८]

यहां तूफान शब्द विशेष रूप से आंधी तूफान से सम्बन्ध न रखकर वरन् प्रकरण के कारण सामाजिक जीवन में विषमताओं के विरुद्ध आज का व्यक्ति जो संघर्ष कर रहा है उसके अर्थ में व्यंजित होता है। ठीक इसी तरह 'नाव' से तात्पर्य जीवन से है। और तट शब्द सामाजिक रूढ़ियों के किनारों से अब जीवन बंधा नहीं रहेगा, इसी कारण शब्दों के विशिष्ट अर्थ प्रकरण में द्योतित होने के कारण शाब्दी व्यंजना है।

नील कील की मुंदी कुई समान चांद
कांति हीन भी रहा अनन्त का विषाद। [49]

प्रस्तुत पंक्तियों में अनन्त शब्द विभिन्न अर्थों विष्णु, लक्ष्मण, बलराम, आकाश में से केवल संयोग के आधार पर आकाश के अर्थ में ग्रहण किया जा सकता है। क्योंकि अनन्त आकाश में ही चांद का उदय होता है, उसी का संयोग अनन्त से होता है। अतः शब्दों के क्लिष्ट अर्थ व्यंजना के कारण शाब्दी व्यंजना को सूचित करते हैं। नयी कविता की यही विशेषता है कि कवि अपनी बात सीधे ढंग से उसके कहने के पीछे गूढ़ एवं गम्भीर भाव निहित रहता है। एक ही शब्द विभिन्न व्यंजक भावों को समेटे रहता है अभिधा और लक्षणा जब अपना कार्य समाप्त कर देती हैं उसके बाद जिस शक्ति द्वारा अर्थ की प्रतीति होती है, वह व्यंजना कहलाती है और उससे जो अर्थ निकलता है वह व्यंग्यार्थ कहलाता है —

अंधेरा घुप
ताल का तट चुप
एक कंकड़ डुप्।
दूसरा डुप्।।
तीसरा डुप्।।! [50]

प्रस्तुत कविता में प्रयुक्त घुप अंधेरा शब्द ताल के आस-पास घने जंगल को द्योतित करता है। 'चुप' शब्द वहां की निर्जनता को, और डुप शब्द ताल का बहुत अधिक गहरा होना व्यंजित करता है। 'डुप' शब्द से वहां की गहरी नीरवता भी व्यंजित होती है। इस प्रकार स्थान विशेष का वातावरण नीरवता,

घुप अंधेरा, चुप और डुप शब्दों से व्यंजित है। जिससे शाब्दी व्यंजना परिलक्षित होती है।

`कितने `बरस` गए
श्याम घन कितने बरस गए
पर हरी के सुधि घाव हरे से
- - - - - फिर भी नये- नये।[५१]

उपर्युक्त पंक्तियों में `बरस` शब्द दो बार प्रयुक्त हुआ है अर्थ की दृष्टि से दोनों बार भिन्न अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। कितने बरस गये, कहकर कवि बरसों के बीच जाने का व्यंग्यार्थ प्रस्तुत करता है। वर्षों के बीत जाने पर भी सुधि के घाव हरे बने रहे। श्याम घन के साथ `बरस` शब्द बरसात के होने को व्यंजित करता है। इस प्रकार यह भी शाब्दी व्यंजना का उदाहरण हुआ।

दुर्दैव बस यही हाल हुआ
हम मिले
और यों बिछुड़ गए
जैसे मिलकट जाते पतंग[५२]

कवि ने अपने मित्र के मिलन और बिछोह को पतंग के मिलने और कट कर अलग हो जाने, इस प्रकार शब्दों से व्यंजित किया है। इन शब्दों में अर्थी व्यंजना प्रतीत होती है।

मौत भी क्या खूब
जो खड़ी मरे रुन पर न रख कर दांत

मर भूखों की खिंची
सूखी आंत पर गिधी[५३]

कवि द्वारा प्रयुक्त यहां 'गिधी' शब्द आर्थी व्यंजना को द्योतित करता है। कवि ने यहां पर भुखमरी से जूझते हुए लोगों को उसी प्रकार व्यंजना का आधार बनाया है जिस प्रकार मरे हुए लोगों पर लोग गीध की तरह टूट रहे हैं। सूखी 'आंत' पर गिधी का बैठना कवि ने व्यंजित किया है।

नई कविता के इन उदाहरणों से साफ जाहिर होता है कि कवियों की भाषा को जन-साधारण तक सम्प्रेषित करने एवं रोचक बनाने के लिए व्यंजना शक्ति का सहारा लिया है। यद्यपि कवि की उलझी हुई संवेदना को सामान्य व्यक्ति बिना डूबे नहीं समझ सकता, परन्तु कवियों ने इसे ग्राह्य बनाने का सार्थक प्रयास किया है। 'व्यग्य और वक्रोक्ति के विचार में भारतीय साहित्य शास्त्रियों ने जिस छाया, कान्ति, गूढ़ा गूढ़ व्यंग्य की बात की है, वह काव्य वस्तु डूबे बिना नहीं दिखायी पड़ती और वह डूबने की प्रक्रिया भी शब्दार्थ व्यापार है क्योंकि शब्द ही डूबने का प्रेरक भी है, शब्द ही तिरने का साधन भी।[५४] ध्वनि सिद्धान्त के समस्त भेद व्यंजना शक्ति पर ही आधारित हैं। जब व्यंजना शक्ति भाव के आश्रित रहती है तब ध्वनि और जब पद के आश्रित हो जाती है तो वक्रोक्ति का रूप धारण कर लेती है। इसी तथ्य को लेकर आनन्दवर्द्धन और कुंतक ने ध्वनि एवं वक्रोक्ति सम्प्रदाय की अवधारणा की। ध्वनिकार का कहना है कि मुख्य रूप से प्रकाश मान व्यंग्यार्थ ही ध्वनि की आत्मा है।[५५] वह अनेक प्रकार का होता है - अर्थान्तर संक्रमित, अत्यन्त तिरस्कृत,[५६] असंलक्ष्य, संलक्ष्य क्रम व्यंग्य ध्वनि आदि नामों से अभिहित किया जाता है। वह वाच्यार्थ की दृष्टि से कोई क्रम में प्रकाशित होता

है तो कोई क्रम के बिना । वाच्य में प्रतीयमान अर्थ का अनध्यारोप,अध्यारोप और आंशिक अध्यारोप मम्मट के इन तीनों भेदों को आनन्दवर्द्धन ने विवक्षित वाच्य(अभिधामूला) अविवक्षित वाच्य(लक्षणा मूला) विवक्षिता विक्षित वाच्य(व्यंजना मूला) में रूपान्तर से समझाया है ।[५७]

ध्वनि चाहे अभिधामूलक हो, या लक्षणामूलक हो, या व्यंजनामूलक हो उसके वास्तविक भेद तीन ही होते हैं, वस्तु अलंकार और रस, वस्तुध्वनि भाषा में पद-पद पर मिलती है । वस्तु के बिना काव्य का अस्तित्व ही नहीं रहता । कविता का महत्व वस्तु की नींव पर ही टिका हुआ है । अलंकार यद्यपि वाच्य है इसलिए यह काव्य का शरीर रूप होता है, कभी- कभी वह वाच्य न रहकर व्यंग्य बन जाया करता है ।[५८] ऐसी अवस्था में अलंकार एक विलक्षण सौन्दर्य ला देते हैं अतएव, ध्वनि अर्थात् काव्यात्मा कहलाते हैं । ध्वनिरूप हो जाने पर उपमा आदि अलंकार नहीं रहते अलंकार्य हो जाते हैं जैसे ब्राह्मण के सन्यासी हो जाने पर ।[५६] रस सदा व्यंग्य रूप होता है । व्यंग्यार्थ जब शब्दशक्ति के द्वारा प्रस्फुटित होता है तो उसे शब्दशक्त्युद्भव ध्वनि, जब अर्थ शक्ति के द्वारा प्रस्फुटित होता है तो उसे अर्थशक्त्युद्भव ध्वनि कहते हैं । और जब दोनों शक्तियों के साहचर्य से प्रस्फुटित होता है तो उसे शब्दार्थोभय शक्ति मूलक ध्वनि कहते हैं । जहाँ अर्थ शक्ति से अन्य अलंकार की प्रतीति होती है वह ध्वनि का अनुरणन रूप व्यंग्य दूसरा प्रकार होता है । आनन्द वर्द्धन ने व्यंग्य की सत्ता लिंग, वचन, कारक, कृत्, तद्धित, समास, उपसर्ग, निपात, काल, रचना, अलंकार वस्तु तथा प्रबन्धादि में मानी है ।[६०] ध्वनिकार के अनुसार ध्वनि के भेद प्रभेदों को कौन गिनने में समर्थ हो सकता है, ध्वनि के अनन्त प्रकार हैं उसमें प्रमुख भेदों की चर्चा की गयी है ।[६१] अत: ध्वनि की सत्ता जो कुछ भी है वह व्यंग्य ही है इसलिए प्रस्तुत अध्याय में

व्यंग्य की चर्चा करेंगे । ध्वनि का विस्तृत विवेचन अगले अध्याय में "भाषा का ध्वनि एवं वक्रोक्ति मूलक प्रयोग" में किया जायेगा । ध्वनिकार के अनुसार ध्वनि के सभी भेदों में व्यंग्य का अवभासित होना ही ध्वनि का पूर्णलक्षण है ।[६२]

नयी कविता की भाषा वाचक शब्दों में भी लक्षक और व्यंजक शब्दों को समेटे हुए है- वह अपने शब्दों को व्यष्टि से समष्टि तक पहुंचाना चाहता है । जन-साधारण में प्रचलित शब्द को लेकर अपने विशिष्ट अनुभव को उभारने के लिए साधारण अर्थ से बड़ा अर्थ उस शब्द में भरना चाहता है । वह शब्दों के संकुचित अर्थ की केंचुल फाड़कर उसमें नया अधिक व्यापक और सार-गर्भित अर्थ भरने का प्रयास करता है । वह काव्य भाषा को सूक्ष्म कल्पनाओं से पृथक कर साधारण बोलचाल की भाषा के निकट लाना चाहता है अत: उसके द्वारा प्रयुक्त शब्द बाजार, गलीकूचे, गांव-गंवई, उर्दू, संस्कृत, अंग्रेजी, ज्ञान-विज्ञान, दर्शन, मनोविज्ञान तथा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से लिये गये होते हैं । वाचक शब्द सही अर्थ न देकर व्यंजना में तब्दील हो जाते हैं । कभी-कभी लक्षणा में ही रह जाते हैं । नयी कविता का कवि कभी एक शब्द को दूसरे शब्द का पर्याय नहीं मानता, प्रत्येक के अपने वाच्यार्थ के अतिरिक्त भिन्न लक्षणाएं और व्यंजनाएं होती हैं । "नयी कविता के कवि को इतना मानने में कोई कठिनाई नहीं होती कि कोई शब्द दूसरे शब्द का सम्पूर्ण पर्याय नहीं हो सकता । क्योंकि प्रत्येक शब्द के अपने वाच्यार्थ के अलावा लक्षणाएं और व्यंजनाएं होती हैं । एक मात्र उपयुक्त शब्द की खोज करते समय हमें हमेशा शब्दों की तदर्थता नहीं भूलनी चाहिए। + + + प्रत्येक शब्द का प्रयोग समर्थ उपभोक्ता उसे नया संस्कार देता है । इसी के द्वारा पुराना शब्द नया होता है। यही उसका काव्य है ।[६३] नयी कविता के प्रवर्तक जगदीश गुप्त ने भी नयी कविता में व्यंग्य एवं व्यंजना व्यापार के महत्व पर जोर दिया है उनके अनुसार-

'लक्षणा व्यंजनादि अनेक शब्द शक्तियों के संश्लिष्ट व्यापार से अगणित अर्थों की निष्पत्ति साहित्य में मानी गयी है जो यथार्थ है'।[६४] नयी कविता में व्यंग्य करने की प्रवृत्ति अनेक कवियों में परिलक्षित होती है। अज्ञेय, भारत भूषण अग्रवाल, शकुन्तला माथुर, विजयदेव नारायण साही, सर्वेश्वर, रघुवीर सहाय, देवेन्द्र कुमार, दूधनाथ सिंह, धूमिल, लीलाधर जगूड़ी, रामदरश मिश्र, प्रयाग नारायण, सुरेश उपाध्याय आदि कवि तो इसके सिद्ध साक्ष्य हैं। नयी कविता के कवियों एवं आलोचकों ने रस की सत्ता को अस्वीकार कर दिया है। 'विपरीत ढंग से कहें तो यह कविता हास्य, बीभत्स, रौद्र, वीर आदि रसों से सम्बन्धित नहीं है।[६५] परन्तु जहां व्यंग्य रहता है वहां किसी न किसी रस की सत्ता का अनिवार्य होना आवश्यक हो जाता है। प्रायः आचार्यों ने व्यंग्य प्रधान काव्य में ही रस की सत्ता स्वीकार की है। 'व्यंग्य मतलब ऐसी अर्थ-व्यंजना जिसमें सत्य की आत्मा है, निर्भीकता की काया है, हास्य का झीना वस्त्र है, और असत्य पर प्रहार करने की तत्परता है। वाक् वैदग्ध्य और विलक्षणता तो नासापुट है[६६] नयी कविता के कवियों में व्यंग्य की स्थिति कहीं हास्य में है तो कहीं करुण में, कहीं बीभत्स में है तो कहीं रौद्र में, कहीं शान्त में है तो कहीं श्रृंगार में।

केशवचन्द्र वर्मा ने हल्के-फुल्के हास्य के माध्यम से तीखा व्यंग्य किया है —

'यह जो तुम स्वर्गीय(२) हुए
खूब हुए।
रेडियो ने सुबह-शाम जिसको दुहराया
गुहराया :
तुम थे यशः काय
स्वभाव से बिल्कुल गाय,[६७]

प्रस्तुत कविता में 'खूब हुए' गुर्राया, स्वभाव से बिल्कुल गाय' में व्यंग्य अपने आप प्रस्फुटित दिखाई दे रहा है। व्यंग्य में कोरा हास्य भी नहीं होता बल्कि एक कसक होती है जिससे समाज की बिडम्बना एवं विसंगतियों को उभारा जाता है। कभी- कभी कवि एक ऐसी शैली में एक ऐसी त्रासद स्थिति को उभारता है और उसमें एक ऐसा रंग भर देता है कि कविता ट्रेजिको-कामेडी में बदल जाती है।[६८] रघुवीर सहाय ने इसी प्रकार अपने देश की भीतरी ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंक फैलाने वाली शक्तियों की निर्ममता पर गहरा व्यंग्य किया है —

तुमने मार डाले लोग
हा हा हा
क्योंकि वे हंसे थे
~~क्यक~~ क्योंकि वे सुस्त पड़े थे
क्योंकि उनमें जीने की आस नहीं थी
तुमने मार डाले लोग
हा हा हा।[६९]

इसी तरह बल्देव वंशी का भी व्यंग्य आतंक फैलाने वाली शक्तियों पर किया गया है —

वह हंसा
उसकी हंसी का रहस्य
कहीं हिरोशिमा था
कहीं नागासाकी
~~कहीं~~ कहीं वीयतनाम
और कहीं भारत[७०]

यद्यपि व्यंग्य और हास्य की प्रकृति में पर्याप्त अन्तर देखा जाता है -

" दिल्ली। हर डिजाइन के आदमीनुमा जानवरों का एक बहुत बड़ा ज़ू है। एक छोटा। फिर बड़ा। फिर और बड़ा ज़ू है।[७१] यद्यपि लगता है कि इसमें कोरा हास्य है परन्तु गहराई से विचार करने पर दिल्ली में मनुष्य का हर डिजाइन का जानवर बनकर इस चिड़िया घर में होने और पशु-पक्षियों की तरह पंक्तिबद्ध नियति भोगने पर ध्यान जाता है।

नये कवियों के व्यंग्य को रस की दृष्टि से परखने पर कभी- कभी खट्टे-मीठे, चरपरे स्वाद का अनुभव होता है। व्यंग्य में करुणा रस की स्थिति उस समय आती है जब कवि किसी स्थिति की मार्मिकता को उभारते हुए उदात्त भावनाओं की सृष्टि करता है। गरीबी हटाओ जैसी बड़ी आवश्यकता के साथ यदि लोग नारेबाजी ही करने लगें तो वह स्थिति अपने आप करुणा में परिणत हो जायेगी —

"गरीबी हटाओ सुनते ही-
वे कब्रिस्तानों की ओर लपके
और मुर्दों पर पड़ी वे चादरें उतारने लगे
जो गंदी और पुरानी थीं
फिर वे नई चादरें लेने चले गये
जब लौटकर आये
तो मुर्दों की जगह गिद्ध बैठे थे।[७२]

प्रस्तुत कविता में समूची बिडम्बना को कब्रिस्तान के परिप्रेक्ष्य से और नये नारे से

बहके हुए मूर्खों द्वारा मुर्दों को गिद्धों से नुचवा देने की स्थिति को व्यक्त करके कवि ने गहन करुणा की सृष्टि की है ।

इसी प्रकार धूमिल की यह कविता करुण व्यंग्य का एक चित्र खींचती है —

कुछ लोगों की सुविधा। दूसरों की हाय । पर सेंकते हैं। वे जिसकी पीठ ठोकते हैं । उसकी रीढ़ की हड्डी गायब हो जाती है, वे मुस्कराते हैं और दूसरों की आंखों की प्रतिहिंसा। करवट बदलकर सो जाती है ।[७३] कवि ने वर्तमान राजनीतिक गतिविधियों पर यह व्यंग्य उभारा है । पीठ ठोककर रीढ़ की हड्डी गायब कर देने वाले सर्व शक्तिमान नेता अथवा विधायक जो करते हैं उसका फल बड़ा करुण ही होता है ।

व्यंग्य की साहित्यिक आधारशिला भाव और भाषा के सुदृढ़ स्तम्भों पर खड़ी होती है कवि व्यंग्य के माध्यम से अपने सामाजिक , राजनैतिक, आर्थिक तथा वैयक्तिक भाव बोध को ऐसी भाषा के माध्यम से व्यक्त करता है जो सीधी नहीं होती, बल्कि जिसके अर्थ अक्षरों की न्यूनता के बावजूद व्यापक और प्रहारात्मक होते हैं ।[७४] कवि व्यंग्य में वास्तविक स्थितियों को दिखाने के लिए नाटकीयता का भरपूर प्रयोग करता है । भावों को सार्थकता से व्यक्त करने के लिए व्यंजना गर्भित शब्दों एवं क्रियाओं का प्रयोग करता है । भावों का पैनापन लिए आक्रोश और व्यंजना गर्भित भाषा के योग से श्रेष्ठ व्यंग्य की सृष्टि करता है —

मैंने कोशिश की थी कुछ कहूं उनसे
लेकिन जब कहा तुमको प्यार करता हूं

मेरे शब्द एक लहरियाता दो गाना बन
उकडू बैठे लोगों पर भिन-भिनाने लगे ।[७५]

प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने भाषा के सार्थक प्रयोग से 'भिन-भिनाने' शब्द के माध्यम से एक पूरे समाज और समय के खालीपन, बासीपन, गंदगी, दैन और जड़ता को पूरी तरह व्यक्त किया है । सामाजिक और राजनीतिक भाव बोध को अत्यन्त व्यंजक भाषा में व्यक्त करके ही व्यंग्य की दृष्टि से वास्तविक अभिव्यक्ति को साहित्यिक आधार प्राप्त हुआ है । जाति बिरादरी साम्प्रदायिकता के नाम पर वोट मांगने वाले नेताओं पर कस कर व्यंग्य हुआ है -- तालियों की गड़-गड़ाहट के बीच। नेता जी ने एक हजार एक का। थैला लिया। फिर। लम्बा चौड़ा भाषण दिया । और अन्त में बोले- इस समय मैं मंत्री नहीं,।वोट का भिखारी हूं। जनता का सेवक। शांति का पुजारी हूं। दांत निपोरते हुए । ही ---- ही ---- ही । सिर्फ एक बात याद रहे(ध्यान रहे) । यह ब्राह्मणों का इलाका है। और मैं तिवारी हूं ।[७६]

नयी कविता के कवियों ने राजनीति, कूटनीति, वोट नीति आदि के पाटों में निरन्तर पिसते रहने वाले सामान्य वर्ग पर व्यंग्य किया है —

तुम कांग्रेसी हो ?
नहीं
कम्युनिस्ट हो ?
नहीं
संघी हो, लीगी हो। समाजवादी हो।जमातवादी हो?
जी नहीं
तो ?

चलो। मेरे साथ आओ। मैं तुम्हारी नुमाइश
करूंगा। बहुत दिनों से लोगों ने आदमी नहीं देखा है।[७७]

नयी कविता के कवियों ने आधुनिक सभ्यता, बनावटी पन, तड़क, भड़क, चमक-दमक पर गहरा व्यंग्य किया है। कवि कहता है मुझे ऐसी सभ्यता नहीं चाहिए, ऐसी सभ्यता में मनुष्यता का लोप हो गया है।[७८]

नयी कविता के कवियों ने शासक वर्ग द्वारा होनेवाली अनीति, जालसाजी और भ्रष्टाचार पर बड़ा गहरा व्यंग्य किया है। संसद से लेकर सड़क तक के अधिकारी चाहे वह वकील हों, या वैज्ञानिक हों, अध्यापक हो सभी के सभी चोर हैं। कानून की आड़ में सभी अपराधी हैं —

'वे सबके सब तिजोरियों के दुभाषिये हैं
वे वकील हैं। वे वैज्ञानिक हैं।
अध्यापक हैं। नेता हैं। दार्शनिक
हैं। लेखक हैं। कवि हैं। कलाकार हैं।
यानि कि —
कानून की भाषा बोलता हुआ
अपराधियों का एक संयुक्त परिवार है।
भूख और भूख की आड़ में
चबाइ गई चीजों का अवशेष
उनके दांतों पर ढूंढना बेकार है।[७९]

प्रस्तुत कविता में चबाई गई चीजों का अवशेष से व्यंग्यार्थ द्वारा यह प्रतीति होती

है कि जैसे गीदड़ भूख की आड़ में मांस चबाता है वैसे ये देश को खा जाने पर तुले हैं। सचमुच ऐसे व्यंग्य बारम्बार हृदय को कचोटते हैं, इसी तरह भारत भूषण अग्रवाल के भी व्यंग्य काफी हद तक समूचे उत्तरदायित्व को निभाते हैं --

संसद भवन में शहद का एक छत्ता लगा है
जिसकी मक्खियां फूलों से नहीं
घावों से रस चूसती हैं
और रानी मक्खी कुछ नहीं करती
बस विमकोट पहनती हैं।[८०]

प्रस्तुत कविता तत्कालीन मन्त्रिमंडल के मंत्रियों को मधुमक्खी और प्रधान मंत्री को रानी मक्खी के रूप में व्यंजित करने में बहुत ही सफल हुई है। इस प्रकार नयी कविता के कवियों ने देश-शासन और राशन को लेकर गहरा व्यंग्य किया है जो पढ़ने वाले को किसी हद तक प्रभावित करती है। इस प्रकार कवियों ने जीवन की विवश और असहाय परिस्थितियों को लेकर गहरा व्यंग्य किया है। ऐसे- ऐसे करुण दृश्यों और प्रसंगों को इन कवियों ने हमारे सामने लाकर रखा है जिसे हम कभी भूल नहीं सकते। इस प्रकार संवेदनशीलता, गम्भीरता, बौद्धिकता, सांकेतिकता, तटस्थ विश्लेषण, या समस्त गुण व्यंग्य को धारदार, पैना-तीखा एवं प्रयोजन युक्त जीवन की विडम्बनाओं को उभारने का सफल प्रयास करते हैं। 'इस व्यंग्य स्वर में विनोद नहीं अमर्ष है, उत्फुल्लता नहीं वेदना है, हल्कापन नहीं गंभीरता है ----- सच्चाई यह है कि वह न स्वयं हंसता है, न हमें हंसाने की चेष्टा करता है।[८१]

लक्ष्मीकांत वर्मा की कविताओं में व्यंग्य के तीखे पन के साथ मर्म को टटोलने वाली कड़ी भी विद्यमान है। 'कभी-कभी सोचता हूं। यह मैंने क्या किया।

मेरा घर। एक हरा-भरा गुलदस्ता हो सकता था। एक संगीत की कड़ी बन सकता था। लेकिन इस युग में। मैंने क्यों वह चुना। जिसमें सिर्फ रेत है, मरु है, विष है, व्यंग्य है।[८२] डा० रघुवंश का कहना है कि लक्ष्मीकान्त वर्मा के इस प्रकार के व्यंग्यों में यथार्थ की स्थिति का बहुत उलझा हुआ रूप है।[८३] श्रीकान्त वर्मा के व्यंग्य चौंकानेवाले अधिक हैं। वर्मा जी ने अन्याय, विलासिता और मुखौटों पर व्यंग्य के माध्यम से तीखा प्रहार किया है। राजकमल चौधरी की कविताओं में राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्थितियों ~~का~~ के चित्रण में व्यंग्य का पुट आ गया है। राजनीति की विडम्बनाओं को राजकमल चौधरी ने बड़ी तल्खी से उभारा है -

" हंसने लगता हूं मैं लिफ्ट के नीचे
हावड़ा ब्रिज के नीचे। महारानी विक्टोरिया
की महाकाय मूर्ति के नीचे खड़ा होकर
मैं हंसने लगता हूं। हंसता हुआ गाने लगता हूं
भारत-भाग्य विधाता। जय है जय है।"[८४]

राजकमल चौधरी के व्यंग्य का उत्स है परिस्थितियों के प्रति करुणा और आक्रोश। कैलाश वाजपेयी की कविताओं में व्यंग्य का उभार आक्रोश के रूप में हुआ है उसमें चुटकी या मजाक की कोई गुंजाइश नहीं है। धूमिल की कविताओं में व्यंग्य एक नाटकीय स्तर पर उभरा है। व्यभिचार, चरित्रहीनता, बेईमानी का पूरा अहसास धूमिल की कविताओं में व्यंग्य के रूप में उभर कर सामने आया है। डा० नामवर सिंह के अनुसार 'सूक्तियों से खिलवाड़ करता हुआ व्यंग्य है।[८५] धूमिल ने समाजवादी खोखलेपन, वर्तमान राजनीति, पर गहरा व्यंग्य किया है- 'दोपहर हो चुकी है। हर तरफ ताले लटक रहे हैं

दीवारों से चिपके गोली के छर्रों। और सड़कों पर बिखरे जूतों की भाषा में। एक दुर्घटना लिखी गई है। हवा में उड़ते हिन्दुस्तान के नक्शे पर। गाय ने गोबर कर दिया है।[८६] जूतों की भाषा में लिखी गयी दुर्घटना, और हवा में उड़ते हिन्दुस्तान के नक्शे पर गाय के गोबर कर दिए जाने पर अर्थ गर्भ व्यंग्य है। तब आप जवाब दो--- इस ससुरी कविता को। जंगल से जनता तक। ढोने से क्या होगा।[८७] में ठेठ गंवई लहजे में कविता को 'ससुरी' कह देना। आक्रोश के साथ-साथ व्यंग्य को उभार देता है। धूमिल की पटकथा और मोचीराम कविता व्यंग्य एवं विडम्बना को उभारने में सफल हैं। 'तुमने पहचाना नहीं मैं हिन्दुस्तान हूँ, में व्यंग्य की जोरदार ललकार है। धूमिल का व्यंग्य गांव को छूता हुआ शहरी बौद्धिकता और ग्रामीण संवेदना में रचा बसा है। व्यंग्य बिजली करंट जैसा कविता में प्रवाहित होता। शब्द बिच्छू के डंक की तरह चोट करते हैं। धूमिल की व्यंग्यात्मक कविता से घायल इंसान छटपटाता और किचकिचाता है परन्तु मरता नहीं। यह विशेषता अकेले धूमिल की नहीं सर्वेश्वर, रघुवीर सहाय और लीलाधर जगूड़ी की भी है। नयी कविता के अधिकांश कवियों में ऐसे ही व्यंग्य करने की ललक है।

आक्रोश एवं व्यंग्य :

नयी कविता में जहां पर हम व्यंग्य को 'ध्वनि' के अन्तर्गत समाहित करते हैं वहां पर आक्रोश वक्रोक्ति का विषय होगा। कवि जब सीधे सरल भाव में किसी गूढ़ बात को उद्घाटित करना चाहता है तब उसकी भाषा भी सीधी एवं सरल न होकर टेढ़ी होती है। भाषा का यही बांकपन उसे वक्रोक्ति की सीमा पर बिठाता है। भारतीय साहित्य शास्त्रियों ने जिसे व्यंग्य और वक्रोक्ति का विषय माना है पाश्चात्य साहित्य शास्त्रियों ने उसे 'आइरनी' और 'टेन्शन' के रूप में महत्व दिया है। जान डीवी, एजरापाउण्ड, और एलेनटेट के अनुसार कविता की संरचना में तनाव की स्थिति महत्वपूर्ण

एवं उपयोगी होती है ।[८८] उनके अनुसार 'तनाव का आशय है कविता में विरोध, वैषम्य, एकाग्रता आदि का कुशल प्रयोग ध्वनि अर्थ की आवृत्ति, तुलना, संवेदन और अनुभूति (फीलिंग) की एक रूपता ये सभी रचना में तनाव की वृद्धि करते हैं ।[८९] कवि समाज की विडम्बना एवं बुराई को, समाज की कमजोरी, न्यूनता एवं विकर्षण को सीधे शब्दों में न कहकर उल्टे या टेढ़े शब्दों में व्यक्त करता है । कभी- कभी वह सामाजिक, राजनैतिक, एवं आर्थिक विसंगतियों को व्यंग्य के माध्यम से अभिव्यक्त करता है, कभी- कभी वह गुस्से में आकर समाज एवं देश में होने वाले अत्याचारों, अन्तर्विरोधों, एवं अन्याय के खिलाफ आक्रोश व्यक्त करता है जिसमें भी व्यंग्य का उत्स होता है । जगदीश गुप्त के अनुसार-'नयी कविता आकर्षण को नहीं, विकर्षण को भी टटोलती है, व्यंग्य करना, चोट करना, झकझोर देना, ध्यान में डूबे हुए को जैसे भी टोक देना और कुछ सोचने पर मजबूर कर देना उसका स्वभाव है वह रिझाती कम है सताती अधिक है । कहते हैं सताये जाने में भी एक मजा है, कभी-कभी वह जीवन के भयानक तथ्यों की ओर संकेत करके हमें सहमा देती हैं, जिनको हम सहज रूप में कभी नहीं देख पाते ।'[९०] व्यंग्य एवं आक्रोश का कारण अकेलापन, छटपटाहट, सन्त्रास, विषमता, विडम्बना, मूल्यों का विघटन, विद्रूपता, वर्जनाएं, यौन कुंठाएं, क्षणबोध, मृत्यु बोध, पीड़ित- सौन्दर्य बोध आदि हैं ।[९१] आक्रोश एवं व्यंग्य को अभिव्यक्त करने के लिए नाटकीयता का भरपूर प्रयोग होना आवश्यक है । शब्द और वाक्यांश भावों एवं विचारों को जीवित करके बना देते हैं —

तुमने मार डाले लोग
हा हा हा
क्योंकि वे हंसे थे

क्योंकि वे सुस्त पड़े थे
क्योंकि उनमें जीने की आस नहीं थी
तुमने मार डाले लोग
हा हा हा[६२]

सर्वेश्वर ने व्यंग्य को प्रहार के रूप में अपनाने के साथ-साथ जीवन की चीख एवं अकेलेपन की छटपटाहट को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है - 'सुनो जब मैं किसी को आवाज देता हूं। वह चीख कर भाग जाता है । और जब कोई स्वयं मेरी ओर बढ़ता है। मैं आंखों को बन्द कर लेता हूं ।[६३]

प्रस्तुत कविता में जिस पर आप विराजमान हैं, मुबारक हो आपको में व्यंग्य है, और हिजड़े में आक्रोश है । इसी प्रकार धूमिल का भी वर्तमान शासन प्रणाली एवं शासक वर्ग के प्रति आक्रोश है - अखबारों की धूप। और वनस्पतियों के हरे मुहावरे तुम्हें तसल्ली देंगे। और जलते हुए जनतन्त्र के सूर्योदय में। शरीक होने के लिए तुम, चुपचाप, अपनी दिनचर्या का दरवाजा खोलकर बाहर आ जाओगे। जहां घास की एक नोक पर। थर-थराती हुई ओस की एक बूंद। फड़ पड़ने के लिए तुम्हारी सहमति का इंतजार कर रही है ।[६४] प्रस्तुत कविता में अखबारों की धूप, वनस्पतियों के हरे मुहावरे, जलते हुए में आक्रोश है और फड़ पड़ने के लिए तुम्हारी सहमति का इंतजार कर रही है में व्यंग्य है । जहां पर नयी कविता के कवि का राजनीति, देश, समाज की विसंगतियों पर तीखा आक्रोश है वहीं पर अनुभूति और अभिव्यक्ति के प्रति भी । जहां पर आज अनुभूति को वहन करने में भाषा सक्षम नहीं है जो कुछ आधी अधूरी शक्ति है भी वह वाह्य दबाव के कारण उसके सहारे अपनी अनुभूति को अभिव्यक्ति न देने की विवशता दो कठिन पाटों के बीच पिसने की स्थिति में है । इस प्रकार की त्रासद स्थिति से गुजरते क्रास पर चढ़े कवि

को कभी- कभी भ्रष्टाचार, व्यभिचार, नैतिक पतन, सामाजिक बुराइयाँ, छुआछूत, शोषण, रिश्वत आदि अनेक सामाजिक समस्याओं पर व्यक्त होनेवाली प्रतिक्रिया म जुगुप्सा को जगाती हैं और इस प्रकार की बुराइयों पर किया जानेवाले व्यंग्य में जुगुप्सा के साथ-साथ आक्रोश की सीमा निहित होती है —

सार्वजनिक पेशाब घरों की तरह
सडांध मारते विद्या मन्दिरों में
बोर्ड डेस्क और दीवारों पर
बनी खिंची खुदी शिश्न और योनि की
आकृतियां। इन्हीं में ढूंढते हैं शोहदे
प्रजातंत्र और भारतमाता ।[६५]

आज के कवि का आक्रोश इस देश के खोखले समाज, और होनेवाले ढकोसले पर है । वह आज के समाज में घुट रहा है उसकी स्थिति बेबशी, अकेलेपन और पंख कटे कबूतर की स्थिति है —

मैं आकाश बाहर
शौक शराबे से दूर
अपने विरुद्ध
पंख कटे कबूतर की तरह
दड़बे में कैद
फिरता हूं
वियतनाम के आगे के टुकड़े ।[६६]

विडम्बनाओं एवं वर्जनाओं में गले तक डूबा आज का व्यक्ति न बाहर निकल सकता है न भीतर मर सकता है। कुत्सित विडम्बनाएं उसे समाज से दूर असमाजोन्मुखी बना देती हैं। विल्सन ओ क्लाउन के अनुसार, 'विडम्बना एक प्रकार की अन्योक्ति है- जिसमें सोचा कुछ जाता है और कहा कुछ जाता है। विरोध वैषम्य एवं अर्थापत्ति के माध्यम से विडम्बना का उद्घाटन होता है विडम्बना प्रायः व्यंग्य एवं उपहास की सीमाओं का स्पर्श करती है और प्रचलित एवं स्वीकृत मान्यताओं का उपहास करती है।'[९७] 'एबसर्डिटी' को पकड़ने के लिए विवेकशील तार्किक संगति आवश्यक है। इसकी अभिव्यंजना की सही शैली व्यंग्य तथा विडम्बना को ही जाती है।[९८] डा० बैजनाथ की कविता में आक्रोश के साथ-साथ व्यंग्य का भी पुट है —

> कुर्सी
> जिस पर आप। विराजमान हैं
> मुबारक हो आपको
> डिजड़े में पुंसकत्व तो जागा
> यह बात और है। अभियोग का दाखिला खारिजा
> साथ- साथ हो।[९९]

अपनी अनुभूति को वाणी देने के लिए अभिव्यक्ति के नाम पर शरीर की त्वचा को खिड़कियों पर पर्दे सी खींच लेने की कसाइयाना मुद्रा अपनाने को मजबूर होना पड़ता है —

> अपने ही भीतर उतर कर अब
> मैं कर लूंगा दरवाजे बंद
> रोशनदान पर टांग लूंगा उतारकर
> चेहरे के नक्श

शरीर की त्वचा खिड़कियों पर
पर्दों सी खींच दूंगा
अभिव्यक्ति के नाम पर[100]

परेश की इस कविता में भाषा की व्यवस्था पर आक्रोश है । दुष्यन्त कुमार की कविता 'मार मैं धूप' पर व्यंग्य के साथ आक्रोश भी है —

'जिस तरह चाहो बजाओ इस सभा में
हम नहीं हैं आदमी हम झुन-झुने हैं ।[101]

इसी प्रकार 'दीवारों पर खून' कविता में आक्रोश के साथ- साथ व्यंग्य का गहरा पुट है —

स्वतन्त्रता माने आजादी
स्वतन्त्रता । माने। आजादी - - - - - ।
कुछ लड़कियां मजे में भीतर ही भीतर तुमपिलाती,
बुद बुदाती
हरामजादी-हरामजादी[102]

नयी कविता में बुद्धिजीवियों की निष्क्रियता पर व्यंग्य और आक्रोश की प्रवृत्ति मिलती है, राजनीतिक मंचों से बरसाये जानेवाले भाषणों, बातों और शब्दों के जादू से बचने के लिए कवि बड़ा ही गहरा मर्म भेदी व्यंग्य करता है —

'शब्द, शब्द, शब्द
बचो ! बचो ! !
जनतन्त्र की टंकी फट गई है
और शब्दों का एक भयंकर रेला
कांता दुला सबको निगले जा रहा है[203]

इसी प्रकार गिरिजाकुमार माथुर के व्यंग्य में तीखापन एवं आक्रोश है। नयी कविता का व्यंग्य बाण की तरह सीधा न होकर टेढ़ा एवं कटावदार है जो एक बार हृदय में धंस जाता है फिर निकलता ही नहीं। सन् साठ के बाद व्यंग्य की चर्चा करते हुए बादाम सिंह रावत का कहना है कि - 'व्यंग्य साठोत्तरी कवि के हाथों में कभी एक उस्तरा बनता है, जो नकली मुखौटों, कोरे आश्वासनों और झूठी प्रतिज्ञाओं को खुरचने के काम आता है और कभी व्यंग्य वहीं आलपिन का काम करता है, जो अपने परिवेश से बेखबर होकर बौद्धिकों को जगाने के लिए चुभाने के काम आती है।[204] तब गजब का सफेद कुर्ता पहने हुए। बोला उप प्रधान मंत्री लेखक सभा में। हममें से हर एक कपड़ों के नीचे नंगा है।[205] हिन-हिनाते हुए क्रोध को मरोड़ दो,[206] इन कविताओं में व्यंग्य एवं आक्रोश की चरम परिणति है। इसी प्रकार क्रोध एवं आक्रोश की मानसिक अवस्थाओं में भी व्यक्ति व्यंग्य को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाता है। यह आवश्यकता नहीं कि आक्रोशी कवि हमेशा व्यंग्य को ही अपना अस्त्र बनाये। किन्तु कलाकार के पास इससे सशक्त हथियार दूसरा कुछ नहीं होता। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जे० सी० ग्रेगोरी ने यह ~~सब~~- तथ्य स्वीकार किया है कि कुछ व्यक्ति ~~इससे~~ कई प्रकार की प्रतिक्रियाएं व्यक्त करने के साथ व्यंग्य भी कर सकता है।[207] इस प्रकार नयी कविता आक्रोश एवं व्यंग्य के दायरों में उभरी हुई दिखाई देती है। अधिकांश कवियों ने व्यंग्य की गहराई तक पहुंचने के लिए आक्रोश की छुरी तेज

की है ।

'अर्थाभिव्यक्ति के नये विधान' :

ध्वनिकार ने 'वाणी नवत्वमायाति - - - मधुमासमिव द्रुमाः।[१०८] कहकर भाषा के जिस नये तथ्य की ओर संकेत किया है वह है भाषा की चिर-नवीनता । प्रत्येक युग एक नई काव्य प्रवृत्तियों को जन्म देता है । इसके साथ भाषा में बदलाव आवश्यक है । ध्वनिकार का कहना है कि जिस प्रकार प्रत्येक वर्ष बसन्त ऋतु का आगमन होता है और वृक्षों में नई- नई टहनियाँ और कोपलें उग आती है उसी प्रकार प्रत्येक नई काव्य प्रवृत्ति एक नई भाषा को जन्म देती है जिसके पुराने अर्थ अभिधेय बन जाते हैं और नये- नये अर्थों का पल्लवन होता है । निराला भी इसी तथ्य को स्वीकार करते हुए कहते हैं कि-'भाषा कभी स्थिर नहीं होती, युग की प्रवृत्तियों के अनुसार ही वह भी नवीन अर्थों से भर जाती है तथा अपना रूप बदलती रहती है । प्रत्येक युग एक विशेष प्रकार का नाद वायुमण्डल में छोड़ता है । वही नाद भाषा की हृतन्त्री में प्रविष्ट हो जाता है । गलनशील युग जीर्ण पतझर के समान आगामी युग की भाषा रूपी बसन्त के लिए खाद बन जाता है- उसकी वीणा से नये छन्द, नये गीत, नये राग, नयी रागिनियाँ, नयी कल्पनाएँ, नयी भावनाएँ फूटने लगती हैं ।[१०९] नयी कविता में आकर भाषा ने विद्रोही रूप धारण किया । शब्दों में अधिक अर्थ या निहित अर्थ से अतिरिक्त अर्थ भरने की लालसा ही कवि भाषा के प्रति विद्रोह करने को जागृत करती रही और विवश होकर कवि अर्थाभिव्यक्ति के नये विधान अर्थात् व्यंजना की नवीन प्रणालियों को ढूंढता रहा । कविहिं एक आखर बल सांचा, ध्वनिकार का कहना है कि -'अक्षर इत्यादि की रचना के समान स्फुरित होनेवाली नयी काव्य वस्तु में पुरानी बस्तु रचना संयुक्त की जाय तो वह

स्पष्ट रूप में निःसन्देह दूषित नहीं होती। विविध अर्थों के अमृत अर्थात् विविध अर्थों के संयोग से भाषा एक नयी गति और नया विस्तार पाती है।[११०] लक्ष्मीकान्त वर्मा अर्थ की इसी नवीनता पर बल देते हैं, उनका कहना है कि जिस कृति में नवीनता नहीं है, अथवा जिसमें जूठन है, पूर्व तथ्यों को ही पुनः दोहरा दिया गया है वह साहित्य नहीं हो सकता —

जीवन है कुछ इतना विराट इतना व्यापक
उसमें है सबके लिए सबका महत्व
ओ मेजों की कोरों पर माथा रख रोने वालों
यह दर्द तुम्हारा नहीं सिर्फ सबका है
हर एक दर्द को नये अर्थ तक जाने दो।[१११]

अर्थाभिव्यक्ति के नये- नये विधान विकसित होने का कारण है, अभिव्यक्ति की अस्पष्टता, भौगोलिक, सामाजिक तथा भौतिक परिवेश का परिवर्तन, अशुभ के लिए शुभ का प्रयोग, व्यंग्य भावनात्मक बल, भूल के कारण शब्दों के प्रयोग में अनिश्चय, लोक व्यवहृत शब्दों के अर्थ में भेद, एक शब्द में एक अर्थ का प्राधान्य, गौण अर्थ का अचेतन रूप से संग्रहण, कभी-कभी शब्दों के प्रयोग में भूल एवं दुर्बोधता भी अर्थ-परिवर्तन का कारण बन ~~सकत~~ जाती हैं। भाषा वैज्ञानिकों ने अर्थ परिवर्तन के तीन प्रमुख कारण माने हैं- अर्थ संकोच, अर्थारोप और अर्थादेश।

कभी- कभी कोई शब्द अनेक अंशों में पहले विस्तार की ओर जाता है और बाद में उसकी प्रवृत्ति संकुचित होने लगती है।[११२] कितने शब्द पहले अनेक अर्थों का बोध कराते हैं परन्तु प्रसिद्धि के कारण उनके अन्य अर्थ संकुचित होने से शेष रह जाते हैं। `धेनु` शब्द का अर्थ दूध देनेवाले सभी जानवरों से है

परन्तु यह शब्द गाय के लिए रूढ़ हो गया है। अर्थ संकोच उस स्थिति में भी होता है जब विचारों में हुए परिवर्तन पहले प्रयुक्त हुए शब्दों द्वारा न होकर केवल एक नये शब्द द्वारा अभिव्यक्त हों, और वह नवीन शब्द परिवर्तन की समस्त क्रिया को अपने में निहित कर ले।[११३] अर्थारोप के अन्तर्गत अर्थविस्तार तथा अर्थ संकोच दोनों समाहित हो जाता है। अर्थारोप में एक अर्थ का आरोप दूसरे अर्थ पर होता है। दूसरे शब्दों में इसे इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि जब शब्द अपना मौलिक अर्थ छोड़ दे और उसके स्थान पर अन्य किसी अर्थ की प्रतीति हो अर्थारोप के कारण किसी शब्द के प्रधान अर्थ अथवा प्रचलित अर्थ का तिरस्कार और गौण अथवा अप्रचलित अर्थ का ग्रहण होता है। ऋग्वेद में असुर शब्द देवता वाचक है। `अ` निषेधात्मक होने के कारण राक्षस के लिए प्रयोग में लाया जाने लगा। इसी प्रकार दुर्लभ से `दूल्हा` शब्द की व्युत्पत्ति हुई। `पैसा` शब्द का प्रयोग, एक पैसे के लिए ही नहीं करोड़ों रूपयों के लिए भी हो सकता है। एक भाषा का शब्द दूसरी भाषा में जाकर अर्थ बदल देता है। अशुभ अथवा अमंगल प्रसंगों, वस्तुओं, व्यक्तियों के लिए शुभ अथवा मंगल सूचक शब्दों का प्रयोग भी अर्थ को एक नया आयाम देता है। पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिकों एवं साहित्य शास्त्रियों का कहना है कि शब्दों में सम्प्रेषणीयता की शक्ति अपूर्ण है। वक्ता शब्द में स्थिति भाव एवं विचारों को स्पष्टत: तथा पूर्णरूप से सम्प्रेषित करने में इंगित हाव-भाव की पूरी सहायता लेते हैं। इनकी सहायता के बिना शब्दों की अभिव्यक्ति में पूरी सहायता नहीं मिल पाती। वक्ता अपने भावों एवं विचारों को शब्द के रूप में एक परम्परित संकेत अथवा प्रतीक देता है।[११४] शब्द के विभिन्न अर्थों में एक अर्थ इतना अधिक व्यापक हो जाता है कि उसके अन्य अर्थ भुला दिए जाते हैं। शब्द के तीन प्रकार काव्यशास्त्रियों ने माने हैं - वाचक, लक्षक और व्यंजक, उस शब्द से जो अर्थ निकलता है उस अर्थ

का बोध कराने वाली शव्द की शक्ति है, वाचक की अभिधा, लक्षक की लक्षणा और व्यंजक की व्यंजना । इसके अर्थ भी तीन प्रकार के होते हैं - वाच्यार्थ, लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ ।[११५] अर्थ संकोच, अर्थारोप और अर्थ विस्तार । इन्हीं तीनों वाच्य, लक्ष्य और व्यंग्य भेदों के पर्याय हैं । ध्वनिकार ने वाच्य और व्यंग्य(प्रतीयमान) इन्हीं दो अर्थों का उल्लेख करते हुए व्यंग्यार्थ को काव्य की आत्मा बताया है । व्यक्ति संकेत द्वारा जिस अर्थ को समझता है, और जिस अर्थ को अपने हृदय में उतारता है वही सच्चा काव्यार्थ है ।[११६] प्रधान अर्थ से गौण अर्थ निकालने में परिस्थिति अथवा प्रसंग का भी बहुत बड़ा महत्व है । परिस्थितियां जिनमें किसी शव्द का प्रयोग होता है और भी बहुधा शब्द के प्रधान तत्व अथवा अर्थ के परिवर्तन में मुख्य रूप से सहायक होती हैं।[११७] मम्मट का कहना है कि वाचक, लक्षक और व्यंजक अर्थों में व्यंजना की शक्ति निहित है । नयी कविता के वाच्यार्थ में व्यंग्यार्थ की फलक है । नयी कविता का कवि जन-साधारण में प्रचलित शव्दों को ही ग्रहण करता है और उसे विशिष्ट अनुभूति से गर्भित कर साधारण अर्थ से भी बड़ा अर्थ उसमें भरना चाहता है । उसकी साधारणीकरण की धारणा पुरानी हो गयी है । अत: वह शव्दों के संकुचित अर्थ को केवल उतार कर उसमें नया अधिक व्यापक और सार गर्भित अर्थ भरने का प्रयास करता है । 'नयी कविता के कवि को इतना मानने में कोई कठिनाई नहीं होती कि कोई शव्द दूसरे शव्द का सम्पूर्ण पर्याय नहीं हो सकता । क्योंकि प्रत्येक शव्द के अपने वाच्यार्थ के अलावा लक्षणाएं और व्यंजनाएं होती हैं । एक मात्र उपयुक्त शव्द की खोज करते समय हमें हमेशा शव्दों की तदर्थता नहीं भूलनी चाहिए । + + --- + + प्रत्येक शव्द का प्रयोग समर्थ उपभोक्ता उसे नया संस्कार देता है । इसी के द्वारा पुराना शव्द नया होता है । यही उसका काव्य है ।'[११८] निरन्तर प्रयोग के कारण प्रत्येक व्यंजक शव्द धीरे- धीरे अपनी द्योतन शक्ति नष्ट कर देता है, और वाचक की श्रेणी में आ जाता है । 'जब चमत्कारिक अर्थ मर

जाता है और अभिधेय बन जाता है, उस शब्द की रागोत्तेजक शक्ति क्षीण हो जाती है, उस शब्द से रागात्मक सम्बन्ध नहीं स्थापित हो पाता। कवि तब उस अर्थ की प्रतिपत्ति करता है जिससे पुनः राग का संचार हो, पुनः रागात्मक सम्बन्ध स्थापित हो।[११६] ध्वनिकार के अनुसार इस ध्वनि तथा गुणीभूत व्यंग्य में किसी एक से अलंकृत होकर, पुराने कवियों की वाणी वाच्य-वाचक द्वारा अनेकानेक अर्थों से उपनिबद्ध होकर एक अद्भुत नवीनता को प्राप्त होती है। प्राचीन कवि अत्यधिक पुराने अर्थ को भी चमत्कार जन्य व्यंग्य के साँचे में ढालकर एक अपूर्व रमणीयता एवं नवीनता ला देते हैं।[१२०] इस अपूर्व नवता की व्याख्या करने के लिए आनन्द वर्द्धन ने अविवक्षित वाच्य ध्वनि के अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ध्वनि तथा अर्थान्तर संक्रमित वाच्य ध्वनि के भेदों तथा विवक्षितान्य पर वाच्य ध्वनि के संलक्ष्य क्रम, असंलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि के भेदों का सहारा लिया। किस प्रकार पुरानी सामग्री इन ध्वनि भेदों के माध्यम से अपूर्वता एवं नवता को प्राप्त होती है उसका विस्तृत विवेचन किया।[१२१] आनन्द वर्द्धन के अनुसार यह पद्धति कवियों में एक ही वाच्य द्वारा अनेक व्यंग्य प्रस्तुत करने की क्षमता का विकास करती है। यह नवीनता नवीन व्यंग्य तथा नवीन व्यंजक दोनों से आती है। कवि अपनी प्रतिभा के बल से भाषा में एक नया प्रयोग करता है।[१२२] काव्य भाषा में अर्थ शक्ति से उद्भूत अनुरणन रूप व्यंग्य ध्वनि एक नया निखार ला देता है, व्यंग्य एवं व्यंजक भेद के आश्रित होकर ध्वनि कविता में नये- नये अंकुर के रूप में फूट पड़ती है।[१२३]

आनन्द वर्द्धन ने वाच्यार्थ में नवीनता लाने के लिए नवीन उपाय बताये हैं और उनके नवीन उदाहरण भी प्रस्तुत किए हैं। उनका कहना है कि केवल व्यंग्यार्थ के कारण ही अर्थों में नवीनता नहीं आती, वाच्यार्थ विशेष

की दृष्टि से भी अर्थों में नवीनता हो सकती है ।[१२४] इस विषय का विश्लेषण करते हुए उन्होंने कहा है कि-'व्यंग्यार्थ निरपेक्ष केवल शुद्ध वाच्यार्थ में भी अवस्था, देश,काल, आदि के वैशिष्ट्य से भी नवता आ जाती है, अर्थात् एक ही वाच्य वस्तु अवस्थादि भेदों से वर्णित होकर अनेकानेक प्रकारों में प्रतीत होने लगता है । इसके उपरान्त ध्वनिकार ने देश-कालादि के अन्तर से वाच्य वस्तु में आयी नवीनता के अनेक उदाहरणप्रस्तुत कर अन्त में वस्तु के सामान्य और विशेष दो भेदों में से विशेष को ही काव्य का वर्ण्य स्वीकार किया है । तथा सामान्य को वर्ण्य मानने वालों द्वारा वाच्य की नवीनता न मानने वालों का खण्डन किया है । इस प्रकार व्यंग्यार्थ शब्द के ~~अ~~ अर्थ में परिवर्तन लाने का एक महत्वपूर्ण कारण है । शब्द के अभिधेयार्थ के विपरीत अनेक नये-नये अर्थों की अनुभूति की जा सकती है । नयी कविता के कवियों ने प्रगतियुगीन भाषा से दो कदम आगे बढ़कर बता दिया कि परिचित और साधारण शब्द भी अभिव्यक्ति की नई ताजगी से नई भंगिमाओं में सामने आते हैं । सही सन्दर्भों से जुड़कर ही शब्दों में चमक आ पाती है । धूमिल की कविता की यही विशेषता है- उनकी भाषा में शब्दों को सही सन्दर्भ में सही जगह रखा गया है, और लोगों ने देखा कि सही सन्दर्भ पाकर वे शब्द डाइनामाइट की तरह हुए जा रहे हैं । यानी कि उनमें बिस्फोटक क्षमता आ ~~गई~~-ह गयी है ।[१२५] कविता बनते हुए शब्द का कितना गहरा रिश्ता लोहे की आवाज, या मिट्टी में गिरे हुए खून के रंग से होता है । इसके पूरे व्यंग्य को व्यंजित करनेवाली काव्य भाषा पायी जा सकती है —

शब्द किस तरह। कविता बनते हैं
इसे देखो। अक्षरों के बीच गिरे हुए आदमी को पढ़ो
क्या तुमने सुना कि यह। लोहे की आवाज है या
मिट्टी में गिरे हुए खून का रंग

लोहे का स्वाद लोहार से मत पूछो
उस घोड़े से पूछो
जिसके मुंह में लगाम है। [१२६]

धूमिल की उपर्युक्त कविता में `अक्षरों के बीच गिरा हुआ आदमी, वह घोड़ा जिसके मुंह में लगाम है, को समझने के लिए एक नये तौर- तरीके से अर्थ की अभिव्यक्ति को ढूंढ़ना पड़ता है। घोड़ा जिसके मुंह में अभी भी आर्थिक गुलामी की लगाम है इस अमानवीय विडंबना को कवि ने एक नई टैकनीक, नई अर्थवत्ता के साथ उभारने का प्रयास किया है।

इस प्रकार नयी कविता के कवियों द्वारा प्रयुक्त, अक्षर, शब्द, वाक्य, भाषा, क्रिया, विशेषण आदि भाषिक शब्द मानव जीवन की विडम्बनाओं, विसंगतियों का बोध कराते हैं। किसी मनुष्य को शब्द और स्त्री को क्रिया की संज्ञा भी दी गयी है। नयी कविता में प्रयुक्त `व्याकरण` और `मुहावरा` शब्द मनुष्य की विविध घटनाओं एवं क्रिया-कलापों का बोध कराते हैं उसका सम्बन्ध अक्षरों वाली भाषा से कदापि नहीं —

उन्होंने किसी चीज को।सही जगह नहीं रहने दिया है
न संज्ञा। न विशेष। न सर्वनाम
एक समूचा और सही वाक्य
टूट कर बिखर गया है
उनका व्याकरण इस देश की शिराओं में
छिपे हुए कारकों का हत्यारा है। [१२७]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि द्वारा प्रयुक्त- संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, वाक्य, व्याकरण, कारक आदि नये शासकों द्वारा किये गये परिवर्तन और अनाचारों को द्योतित करते हैं। स्वतन्त्रता के बाद शासकों ने मनमाने ढंग शासन किया, अव्यवस्था एवं दुराचार को पनपने दिया। पुराने नियमों एवं सामाजिक व्यवस्था को खंडित किया। सही जगह न रहने देना का अर्थ अव्यवस्था एवं कुरीतियों को पनपने देना, सही वाक्य टूट कर बिखर गया है से तात्पर्य समुचित नियम प्रणाली का भ्रष्ट हो जाना। नयी कविता के कवियों ने सांप, बिच्छू, कौआ, गिद्ध, सड़क, घोड़ा, मौसम, व्याकरण, मुहावरा, काव्यशास्त्र आदि शब्दों को आधुनिक संदर्भों में जोड़कर अर्थाभिव्यक्ति की एक नई दिशा कायम की। तथा साथ-साथ अर्थों का विस्तार भी किया है। नई कविता बहुत से ऐसे भी वाक्य हैं जिनका बहुत गहराई में जाने कई अर्थ निकल सकता है- आवाजों में सुलगते सन्नाटे[१२८], मेरा डर मुझे चर रहा है[१२९] हवा से फड़फड़ाते हुए हिन्दुस्तान के नक्शे पर गाय ने गोबर कर दिया है। [१३०] उसकी हर आदत दुनिया के व्याकरण के खिलाफ थी। [१३१] मैं कविताओं में उनका पीछा करना चाहता हूं इसके पहले कि वे। उसे किसी संस्था में, या व्याकरण की किसी अपाहिज धारणा में बदल दें। [१३२] शहर का व्याकरण ठीक करने के लिए[१३३], उपर्युक्त पंक्तियों में सुलगते सन्नाटे का सामान्य अर्थ है धीरे-धीरे आग का पकड़ना। संत्रास, घुटन से बेचैन जलते हुए महानगर वर्णन-कवि कर रहा है जिस प्रकार सुलगती हुई आग में, आग का अस्तित्व है उसी प्रकार आवाजों के बीच सन्नाटे का अस्तित्व है। सुलगते हुए का यहां अर्थ हुआ बीज रूप में विद्यमान।

मेरा डर मुझे चर रहा है, में डरने का अर्थ घास चरना नहीं बल्कि धीरे-धीरे काम खतम करना, समाप्त करना या सफाचट करना है। इसी प्रकार गाय का प्रयोग कवि ने कांग्रेस के अर्थ में किया है। फड़फड़ाते हुए

हुए नक्शे से देश की विकसित हरीतिमा को नष्ट-भ्रष्ट कर देना । 'व्याकरण' शब्द का प्रयोग एक नियम के अर्थ में, शुष्क विषय के अर्थ में, व्यवस्था के अर्थ में कवि ने किया है । इस प्रकार नयी कविता कवियों ने एक-एक शब्दों की खोल में अगणित अर्थों के भरने का प्रयास किया है जिससे अर्थाभिव्यक्ति के नये-नये विधान विकसित हुए हैं । जगदीश गुप्त का कहना है कि -'लक्षणा, व्यंजना आदि अनेक शब्द शक्तियों के संश्लिष्ट व्यापार से अगणित अर्थों की निष्पत्ति साहित्य में मानी गयी है जो यथार्थ है ।[१३४] नयी कविता बौद्धिकता की छाया में विकस रही है, अत: उसमें एक अर्थ अन्तर्निहित आलोचनात्मकता मिलती है, यथार्थ चित्रण का आग्रह, सूक्ष्म व्यंग्य, तथा शैलीगत वैचित्र्य एवं नये- नये अर्थों को ध्वनित करने वाला अभिनव प्रतीक विधान आदि जिन्हें नई कविता की प्रमुख विशेषताएं कहा जा सकता है ।[१३५] अज्ञेय का ' मैं सन्नाटा बुनता हूं, नीलम सिंह का' भय का सैलाब' भवानीप्रसाद मिश्र का 'खुशबू के शिला लेख' सर्वेश्वर की काठ की घंटियां, जगूड़ी का नाटक जारी है, धूमिल का 'संसद से सड़क तक', श्रीकान्त वर्मा का 'जलसाघर' आदि नये-नये अर्थों के स्तर, तथा शब्दों में छिपे गूढ़ार्थ की नई-नई पर्तों को नयी भाव-भंगिमा के साथ खोलते हैं - इसीलिए धूमिल ने कहा है —

छायावाद के कवि शब्दों को तौलकर रखते थे
प्रयोगवाद के कवि शब्दों को टटोलकर रखते थे
नयी कविता के कवि शब्दों को गोलकर रखते थे
सन् साठ के बाद के कवि शब्दों को खोलकर रखते हैं ।[१३६]

खोलकर रखना या पर पूरे साहस के साथ बिना लाग-लपेट के अभिव्यक्त करना अर्थ रखता है । वस्तुत: नयी कविता के कवियों ने भाषा की अर्थवत्ता एवं व्यंजकता को बढ़ाने के लिए भाषा सम्बंधी अनेकानेक प्रयोग किये । इसी क्रम

में उन्होंने व्याकरण सम्बन्धी नियमों का भी उल्लंघन किया । काव्य शास्त्र सम्बंधी पुराने ढांचे को तोड़कर उसे अधिक सारगर्भित, सशक्त एवं नईसार्थकता प्रदान की ।

नयी कविता : भाषा का ध्वनि एवं वक्रोक्ति मूलक प्रयोग :

ध्वनि एवं वक्रोक्ति सिद्धान्त का आधार है भाषा की व्यंजना शक्ति । वक्रोक्ति सम्प्रदाय का जन्म ध्वनि सम्प्रदाय की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप हुआ था । काव्य के जिन सौन्दर्यों का तात्विक विवेचन एवं आत्मपरक व्याख्या आनन्द वर्द्धन ने ध्वनि को मूलाधार बनाकर निहारा था। उसी का वस्तु परक एवं शैली वैज्ञानिक विवेचन कुंतक ने अपनी अप्रतिम प्रतिभा और सूक्ष्म बुद्धि द्वारा प्रस्तुत किया । इसीलिए भारतीय काव्य शास्त्र में आनन्द वर्द्धन द्वारा प्रस्तुत ध्वनि और कुंतक द्वारा प्रस्तुत वक्रोक्ति भाषा के प्राण तत्व एवं शरीर की तरह जाने जाते हैं । जब तक भाषा में उक्ति वैचित्र्य नहीं होगा, तब तक ध्वनि भी नहीं, क्योंकि बिना शरीर की सत्ता के प्राण का भी रहना असंभव है । वक्रोक्ति यदि खिला हुआ फूल है तो ध्वनि उसमें व्याप्त सुगंध । जब व्यंजना किसी वाक्य या पद के आश्रित होती है, अर्थात् शैली मूलक होती है तो वक्रोक्ति के निकट जाना जाता है और जब व्यंजना भावमूलक एवं भावाश्रित होती है तो ध्वनि के निकट माना जाता है । ध्वनि एवं वक्रोक्ति दोनों में व्यंजना की समान वाहिनी है । दोनों के मूल में वैचित्र्य विद्यमान है । ध्वनि का वैचित्र्य अर्थ रूप होने से आत्मपरक और वक्रोक्ति का वैचित्र्य उक्तिपरक होने के कारण वस्तुपरक अर्थात् देह परक है । जिस प्रकार आनन्द वर्द्धन ने `ध्वनि` में काव्य के सूक्ष्मातिसूक्ष्म अवयव जैसे- सुप्, तिंग, वचन, कारक, कृत्, तद्धित्, समास, उपसर्ग, निपात, काल, लिंग, रचना, वर्ण, पद, वाक्य, अलंकार, वस्तु तथा प्रबन्धादि का विवेचन किया है

उसी प्रकार कुंतक ने भी वर्णों से लेकर पद पूर्वार्द्ध, पद परार्द्ध, प्रकरण तथा प्रबन्ध तक का विवेचन किया है। [१३७]

ध्वनि महाकवियों की वाणी में प्रसिद्धार्थ (लोक प्रचलित) अर्थ से अतिरिक्त प्रतीयमान अर्थ को कहते हैं। [१३८] जहां अर्थ स्वयं को तथा शब्द अपने अभिधेय अर्थ को गौण करके उस अर्थ को प्रकाशित करते हैं जिसमें तरुणी लावण्य के सदृश व्यंग्यार्थ की झलमलाहट रहती है। इन दोनों अर्थों में सिर्फ अन्तर इतना ही होता है जितना कि दीपशिखा और उससे नि:सृत लज्जा में। ध्वनि के विषय में इसके पहले 'भाषा का व्यंग्य एवं व्यंजना व्यापार' में कहा जा चुका है। ध्वनि के भेदोपभेद की चर्चा इसके पहले नहीं की गयी है। अत: इस अध्याय में वक्रोक्ति के भेदोपभेद के साथ-साथ ध्वनि की भी चर्चा करना अपेक्षित है। क्योंकि वक्रोक्ति ध्वनि की वस्तुपरक कल्पना है। ध्वनि और वक्रोक्ति के भेदों में बहुत अधिक साम्य है। वक्रोक्ति का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ है भाषा का बांकपन, यह बांकपन केवल अर्थों तक ही सीमित नहीं होता, वर्ण से लेकर पद, प्रत्यय, प्रकरण एवं प्रबन्ध तक इसकी सत्ता होती है। प्रत्येक व्यंग्य प्रधान कविता में वक्रोक्ति अवश्य होती है परन्तु वक्रोक्ति में व्यंग्य का होना आवश्यक नहीं है। कभी- कभी व्यंग्य के बिना भी वक्रोक्ति जानदार होती है। वक्रोक्ति को कुछ लोग ठिठोली, ठट्ठा के रूप में मानते हैं। कुंतक के अनुसार प्रसिद्ध अभिधान का अतिक्रमण करनेवाली विचित्र अभिधा ही वक्रोक्ति है और यही विदग्धजनों के व्यवहार की वाणी है। [१३९] कुंतक मूलत: अभिधावादी है उन्होंने वक्रोक्ति को विचित्र अभिधा ही माना है। कुंतक के पहले दण्डी, भामह, रूद्रट आदि आलंकारिकों ने वक्रोक्ति को अलंकार के रूप में माना है। पाश्चात्य काव्यशास्त्रियों ने भी काव्य में वाग्वैदग्ध्य एवं वक्रोक्ति की सत्ता स्वीकार की है। टिलियर्ड का कहना है कि कविता की भाषा कभी अभिधात्मक काव्य हो ही नहीं सकता। कविता की भाषा थोड़ा, बहुत वक्र तो होती ही है। [१४०]

एलेक्जेंडर बेन ' का कहना है कि- 'वक्रोक्ति में वक्ता के वास्तविक आशय को दर्शाने के लिए स्वर और शैली को कुछ ऐसे घुमा-फिरा दिया जाता है कि उसका अर्थ कथ्य के पूर्णतः विपरीत हो जाता है।[१४१] इसी बात को स्पष्ट करते हुए 'मैरिडिथ' का कहना है कि -'यदि आप हास्यास्पद पर सीधा व्यंग्य न करके, उसे कुछ इस तरह उमेठ दें, कि उसके मुख से आनन्द की चीख निकलवा दें, प्यार के आवरण में उसे डंक मारें जिससे वह असमंजस में पड़ जाय कि वास्तव में किसी ने उस पर प्रहार किया है अथवा नहीं, तब समझ, समझिए आप वक्रोक्ति का प्रयोग कर रहे हैं।[१४२] प्रो० जगदीश पाण्डेय के अनुसार-'वक्रोक्ति कार भी धनुष की भांति झूठी विनम्रता में झुककर तीर की तरह चोट करता है, उसमें स्तुति तथा निन्दा दोनों झूठी होती हैं। स्तुति, निन्दा तथा वक्रोक्ति में भेद ध्वनि का है, काकु का है ध्वनि में ही अर्थ गूढ़ रहता है। वक्रोक्ति तथा सच्ची स्तुति या निन्दा में वही साम्य है, जो कोयल और कौए में है, वक्रोक्ति का सच मानना विश्वास-घात का आखेट बनाना है।[१४३] भामह के अनुसार वक्रोक्ति का अभिप्राय है शब्द और अर्थ की वक्रता का समन्वित रूप। यह वक्रोक्ति की इष्ट और भाषा का अलंकार है।[१४४] भामह के अनुसार वक्रोक्ति और अतिशयोक्ति दोनों पर्याय हैं। अतिशयोक्ति में अतिशय का अर्थ हुआ लोकातिक्रान्त गोचरता, अर्थात् लोक प्रचलित सामान्य भाषा का अतिक्रमण करने वाली भाषा जिसमें वैचित्र्य हो।[१४५] मम्मट ने भी इसे वक्रोक्ति का पर्याय बताया है।[१४६] आधुनिक शब्दावली में दोनों का एक ही अर्थ हुआ लोकातिक्रान्त गोचर उक्ति अर्थ, अर्थात् शब्द एवं अर्थ का लोकोत्तर चमत्कार पूर्ण प्रयोग। वक्रोक्ति एवं अतिशयोक्ति में अर्थ का विचित्र रूप से भावन होता है। भामह ने कविता के समस्त सौन्दर्य को वक्रोक्ति के आश्रित माना है। जहां वक्रोक्ति नहीं है, वहां अलंकार की सत्ता ही नहीं है। इसीलिए भामह ने हेतु, सूक्ष्म और लेश को अलंकार नहीं माना, उनके अनुसार हेतु, सूक्ष्म और लेश अलंकार वक्रोक्ति का

ही अभिधान है । कुंतक के अनुसार वक्रोक्ति एक ऐसा अलंकार है जो वैचित्र्य के आ जाने से चमत्कार का विधायक होती है ।[१४७] राजशेखर के अनुसार कवि के इस विचित्रतापूर्ण कथन का स्वभाव नियत नहीं रहता जबकि इसके विपरीत लोकभाषा का अभिप्राय सदा नियत रहता है ।[१४८] कुंतक ने इसी वैचित्र्यपूर्ण कथन को वक्रोक्ति बताया जो प्रसिद्ध अभिधान का अतिक्रमण करनेवाली ऐसी विचित्र अभिधा है जिसके अन्तर्गत काव्य के समस्त चारुत्व विद्यमान हैं ।[१४९] कवियों की भाषा सिर्फ कथा मात्र से शोभित नहीं होती, उसमें वैचित्र्य का होना आवश्यक है ।[१५०] वामन के अनुसार काव्य-भाषा में तिरोहित होनेवाला यही वैचित्र्य माधुर्य गुण का आधायक है ।[१५१] जिस प्रकार वक्रोक्ति प्रसिद्ध अर्थ से अतिरिक्त अन्य अर्थ की प्रतीति कराती है उसी प्रकार ध्वनि भी प्रसिद्ध अर्थ से अतिरिक्त अन्य अर्थ की प्रतीति कराती है । दोनों में प्रसिद्ध वाच्यार्थ और वाचक शब्द का अतिक्रमण है । आनन्द-वर्द्धन का सूत्र 'यत्रार्थः शब्दो वा', और कुंतक का 'शब्दार्थौ सहितौ वक्र कवि', दोनों भाषा के इसी वैचित्र्य की ओर संकेत करते हैं ।

भामह ने वक्रोक्ति विहीन कथन को वार्ता कहा है । भामह के अनुसार वक्रोक्ति का मूल गुण है शब्द अर्थ का वैचित्र्य, दण्डी ने स्वभावोक्ति और वक्रोक्ति को ही काव्य का मूलाधार स्वीकार किया है । कुंतक के अनुसार काव्य में जो कुछ सुन्दर चमत्कार पूर्ण अथवा अलंकृत है वह सब वक्रता का ही चमत्कार है । कुंतक ने वक्रोक्ति के मूलतः ६ प्रकार बताये हैं और ६ प्रकारों के भी बहुत से भेदोपभेद हो सकते हैं जो काव्य भाषा में सौन्दर्य के आधायक हैं ।[१५२] कुंतक का यह वर्गीकरण भाषा विज्ञान एवं व्याकरण के मूल भूत तत्वों पर आधारित है । इसी प्रकार 'ध्वनि' का वर्गीकरण भी भाषाविज्ञान एवं व्याकरण की आधार शिला पर निर्मित है । वस्तुतः ध्वनि और वक्रोक्ति भाषा

का ही वैचित्र्य है । नयी कविता भाषा में जो वैचित्र्य मूलक प्रयोग हुए हैं उनका अध्ययन इन दोनों सिद्धान्तों के आधार पर बड़ी गहराई और आसानी के साथ किया जा सकता है । ध्वनि और वक्रोक्ति दोनों अलग- अलग होते हुए भी तात्विक दृष्टि से एक है और नयी कविता की भित्ति इन्हीं सिद्धान्तों के आड़ में टिकी है । जगदीश गुप्त ने यह पूर्णतय: स्वीकार किया है कि ध्वनि और वक्रोक्ति को कभी फुठलाया नहीं जा सकता, `अलंकार, रीति, वक्रोक्ति, परक समाधान उस युग की विलासमूलता तथा कौशलप्रियता को विशेष प्रतिबिम्बित करते हैं । अत: मानवीयता का अंश इनमें कम है, ध्वनि मत प्राय: तटस्थ है । यद्यपि वह मानवीय अर्थचेतना की ओर गंभीर संकेत करता है ।[१५३] यह सत्य है कि आज की कविता के सन्दर्भ में `ध्वन्यालोक' की तरह किसी नये ध्वनिशास्त्र की रचना नहीं की जा सकती, कारण अनेक हैं । परन्तु यदि आज की कविता का प्रभाव ग्रहण किसी भी स्तर पर किसी के भी द्वारा होता है तो ध्वनि सिद्धान्त के द्वारा ही हो सकता है ।[१५४] `विपरीत ढंग से कहें तो यह कविता हास्य, वीभत्स, रौद्र, वीर आदि रसों से सम्बंधित नहीं है, अनिश्चित होते हुए भी यह कविता एक निश्चित भाव-क्षेत्र की है, और उसमें कुछ उक्तियां बिम्ब शब्दादि ऐसे हैं, जो पढ़ने वाले को उस क्षेत्र में सोचने के लिए प्रोत्साहित करते हैं । कविता की सीमा को ही यदि पाठक अपनी ही सीमा मान लें तो यही नहीं ऐसी बहुत सी कविताएं अपूर्ण लगेंगी, जो प्रभाव के लिए मूलत: भाषा के अप्रकट साधनों पर निर्भर करती हैं जैसे वक्रोक्ति, श्लेष, अप्रस्तुत उपमान आदि ।[१५५] इस प्रकार नयी कविता के कवि परोक्ष एवं प्रत्यक्ष रूप से वक्रोक्ति और ध्वनि को भाषा में चमत्कार की सृष्टि हेतु अनिवार्य मानते हैं । कुंतक ने वक्रोक्ति के जिन ६ भेदों की चर्चा की है वे हैं थे— वर्णा विन्यास वक्रता, पदपूर्वार्द्ध वक्रता, पद-परार्द्ध वक्रता, वाक्य वक्रता, प्रकरण वक्रता, प्रबन्ध वक्रता, इसी को आनन्दवर्द्धन क्रमश: वर्ण ध्वनि, पदध्वनि, वस्तुध्वनि, अलंकार ध्वनि, प्रबन्ध ध्वनि आदि

रूपों में पहले ही विवेचन कर चुके थे। नयी कविता की भाषा में छिपे हुए ध्वनि, वक्रोक्ति के रहस्यों एवं चमत्कारों को खोजने के लिए इन प्रमुख क भेदों का सहारा लिया जा सकता है।

१- वर्ण-विन्यास वक्रता एवं वर्ण ध्वनि :

वर्णों एवं अक्षरों का एक विशेष प्रकार से प्रयोग, एक दो अथवा बहुत से वर्ण थोड़े-थोड़े अन्तर से बार-बार उसी रूप में प्रयुक्त होते हैं उसे वर्ण विन्यास वक्रता कहा जाता है।[१५६] वर्ण विन्यास वक्रता का समस्त चमत्कार वर्ण रचना पर आश्रित होता है। इसी को ध्वनिकार ने वर्ण-ध्वनि अथवा रचना ध्वनि कहा है। इसे ही अन्य आचार्यों ने अनुप्रास कहा है।[१५७] कुंतक ने यमक, यमकाभास अथवा यमक से साम्य रखने वाले अन्य सभी वर्ण चमत्कारों को वर्ण-विन्यास वक्रता के अन्तर्गत समाहित कर लिया है। अनुप्रास के समस्त भेद, वृत्तियां, यमक के सभी भेद, यमकाभास, वर्ण विन्यास के प्राय: सभी प्रयोगों का अन्तर्भाव वर्ण विन्यास वक्रता के अन्तर्गत हो जाता है। कवि की प्रतिभा के अनुसार वर्णों की असंख्य संयोजनाएं हो सकती हैं। कुंतक के अनुसार नित्य नये सन्दर्भों में वर्णों के ये विचित्र प्रयोग भाषा को एक नयी चीज देते हैं।[१५८] नयी कविता के वर्ण-वैचित्र्य का यदि हम अध्ययन करें तो अधिकांश कवियों की कविताओं में यह वर्णन चातुरी विद्यमान है। किसी कवि ने अनुप्रास का सहारा लिया है तो किसी ने श्लेष का तो किसी की काव्य भाषा में अनुप्रास श्लेष यमक की अनुन्यासित उच्छटा की चमचमाहट है। कहीं ओज कान्ति से युक्त भाषा हृदय को दीपित करने में सम-असमर्थ हुई। अज्ञेय, शमशेर, मुक्तिबोध, रघुवीर सहाय, भवानीप्रसाद मिश्र, सर्वेश्वर, धूमिल, जगदीश गुप्त, जगूड़ी, कुंवर नारायण, प्रयाग शुक्ल, दूधनाथ सिंह आदि की कविताओं में वर्णविन्यास के विचित्र प्रयोग परिलक्षित होते हैं।

प्रभाकर माचवे की कापालिक शीर्षक कविता में वर्ण-विन्यास वक्रता का एक उद्धरण द्रष्टव्य है जिसमें चमत्कार का प्रयोग हुआ है।

मरघट
औघड़ का मठ
चट-चट-खट-खट जलती हड्डी -मज्जा
फटपट
कुत्ते भौंक रहे हैं - हौं- हौं -
स्यारों की यक सां चिल्लाहट, कीन और
झपट ;
नदी किनारा
डूब रहा है सांय तारा
चीख किसी पंछी की चीं चीं
जिसके अण्डों और घोंसलों पर भूख से
किसी बाज ने छापा मारा[१५६]

उपर्युक्त कविता में मरघट से लेकर चट खट, फट पट, झपट आदि में 'ट' वर्ण की आवृत्ति में वैचित्र्य लाने से वर्ण विन्यास वक्रता है। इसी प्रकार जगदीश गुप्त की हिम विद्ध कविता में वर्ण विन्यास वक्रता का बड़ा ही सुन्दर समायोजन किया गया है —

बादलों की झील के ऊपर। खिला शिखरों का कमल-वन। भोर ने भरमूठ कुंकुम किरन-केसर इस तरह फेंकी-। वनों के गहन पुरइन पात सारे रंग उठे। ज्योति की बहुरंग, झिलमिल मछलियां झील के तलहीन बादल नीर में बहुत गहरे, बहुत गहरे- तिर गयी।[१६०]

उपर्युक्त पंक्तियों में बादल, झील, खिला शिखरों का कमल वन, मोर ने भरमूठ, कुंकुम, किरन केशर, झिलमिल, झील में प्रयुक्त अनुप्रास छटा वर्ण-विन्यास वक्रता का बड़ा ही सुन्दर उदाहरण है साथ ही वर्ण ध्वनि का भी। वर्ण भाषा का पहला अवयव है, कविता का सृजन वर्ण के बिना असम्भव है। वर्ण-वैचित्र्य से नयी कविता का कोई भी कवि अछूता नहीं है।

२- पद-पूर्वार्द्ध वक्रता : और पद ध्वनि :

वर्ण के बाद काव्य भाषा का दूसरा अवयव पद है जो अनेक वर्णों का समुदाय रूप होता है। पद वक्रता का विवेचन करते हुए कुंतक ने पद को दो भागों में बांटा है पद पूर्वार्द्ध और पद परार्द्ध। पद पूर्वार्द्ध का दूसरा नाम प्रकृति भी है। संस्कृत में मूलत: पद दो प्रकार होते हैं — सुबन्त और तिगड़न्त। भामह के अनुसार काव्य भाषा का सम्पूर्ण सौन्दर्य इन्हीं सुप् और लिंग पदों पर आधारित होता है।[१६१] सुबन्त का पूर्वार्द्ध प्रतिपदिक और तिगडन्त का धातु कहलाता है। पद से तात्पर्य विभक्ति युक्त शब्द से है जो वाक्य में प्रयुक्त होता है। इस प्रकार पद के दो अंग होते हैं प्रकृति और प्रत्यय। प्रकृति के भी दो रूप होते हैं - प्रातिपदिक और धातु, सुबन्त का पूर्वार्द्ध प्रातिपादिक और तिगडन्त का धातु कहलाता है। अतएव, पद पूर्वार्द्ध वक्रता से तात्पर्य प्रातिपादिक तथा धातु से अथवा यों कहें की मूल शब्द की वक्रता से है। कुंतक ने पद पूर्वार्द्ध वक्रता के आठ भेद गिनाये हैं :-

(क) रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता (ख) पर्याय वक्रता (ग) उपचार वक्रता (घ) विशेषण वक्रता (च) संवृति वक्रता (छ) वृत्ति वक्रता (ज) लिंग वैचित्र्य वक्रता (न) क्रिया वैचित्र्य वक्रता।

पद पूर्वार्द्ध वक्रता के इन आठ भेदों में से अधिकांश का ध्वनि के विभिन्न भेदों में सहज ही अन्तर्भाव हो जाता है।[162] कुंतक की रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता आनन्द-वर्द्धन के अर्थान्तर संक्रमित वाच्यध्वनि और अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ध्वनि अर्थात् लक्षणा मूला ध्वनि का ही पर्याय है। रूढ़ि से अभिप्राय है परम्परागत अथवा कोश तथा लोक व्यवहार में जहां कवि अपनी प्रतिभा द्वारा रूढ़ अर्थ पर किसी कमनीय असम्भाव्य अर्थ का अध्यारोप करता है वहां एक विचित्र सौन्दर्य या चमत्कार उत्पन्न हो जाता है।[163] वास्तव में वहां पर लोकोत्तर चमत्कार उत्पन्न ~~हो-जाता-ह~~ करने के लिए रूढ़ अर्थ का किसी अन्य अर्थ में संक्रमण कर दिया जाता है यह चमत्कार लक्षणा के आश्रित है, ध्वनिकार ने इसे अर्थान्तर संक्रमित वाच्य ध्वनि के अन्तर्गत यथावत विवेचन किया है, जहां लोकोत्तर तिरस्कार अथवा प्रशंसा करने के अभिप्राय से इस प्रकार असम्भव अर्थ का अध्यारोप किया जाता है वहां कोई अपूर्व सौन्दर्य ही निखरता है और वाच्यार्थ अत्यन्त तिरस्कृत हो जाता है। जैसे- राख और जंगल से बना हुआ वह। एक ऐसा चरित्र था। जिसे किसी भी शर्त पर राजकमल होना था।[164] उपर्युक्त पंक्तियों में राजकमल शब्द राजकमल चौधरी से तात्पर्य न रखकर किसी महान वैभव सम्पन्न व्यक्ति से है अत: यहां पर राजकमल अर्थान्तर संक्रमित वाच्य ध्वनि का उदाहरण बनकर किसी अन्य अर्थ की प्रतीति कराता है। रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता अर्थात् लक्षणामूला ध्वनि के प्रयोग वे नयी कविता में अधिकांशरूप में हुए हैं -

गड़बड़ी ज्यादा नहीं है। बस वह रास्ता बंद करना है
जहां से चूहे पैठते हैं।
आइए जोर लगाएं -
हां- हां की गरदन हिली ऊपर नीचे
नहीं नहीं की दायें बायें
- - - और बस हिलती रही। मैं तैयार खड़ा सब रहा

मैंने सोचा कुछ और बताऊं,
मैं चूहों से क्यों नफरत करता हूं समझाऊं
तभी मैंने देखा उनके नथुने फड़के
आंखें मिच मिचायीं[१६५]

उपर्युक्त पंक्तियों में किसी राजनीतिज्ञ पर चूहे का अध्यारोप होने के कारण यहां वाच्यार्थ संक्रमित हो जाता है अत: यहां रूढ़ि वैचित्र्य अर्थात् अर्थान्तर संक्रमित वाच्य ध्वनि है। इसी प्रकार रघुवीर सहाय की कविता में भी इस प्रकार के प्रयोग देखे जा सकते हैं —

जब मिलो तिवारी से- हंसो- क्योंकि तुम भी तिवारी हो
जब मिलो शर्मा से- रूंधो- क्योंकि वह भी तिवारी है
जब मिलो मुसद्दी से खिसि आओ[१६६]

कभी- कभी वाच्यार्थ संक्रमित न होकर अत्यन्त तिरस्कृत हो जाता है। अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ध्वनि एवं रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता के नाम से ही इसे जाना जाता है।

हो सकता है कि लोग लोग मार तमाम लोग
जिनसे मुझे नफरत है मिल जायें, अहंकारी
शासन को बदलने के बदले अपने को बदलने लगें
और मेरी कविता की नकलें अकविता जायें।
बनिया बनिया रहे। बाम्हन--बाम्हन और कायथ-
कायथ रहे। पर जब कविता लिखे तो आधुनिक
हो जाये। खीसें बादे जब कहो तब गा दे।[१६७]

उपर्युक्त कविता बनिया-बनिया रहे, बाम्हन बाम्हन रहे, कायथ-कायथ रहे में अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ध्वनि के साथ रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता की स्पष्ट झलक है। इसी प्रकार केदारनाथ सिंह की कविता में 'फिर नये जुते खेतों से क्वा-क्वा बस जायेगा।'[२६८] में रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता और अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ध्वनि है। केदारनाथ अग्रवाल की कविता में भी इस प्रकार के प्रयोग मिल जाते हैं - पड़ने को पड़ गयी है लाल पर श्याम की सुकेशी छाया। उतरने को उतर आया है जलती मशाल पर आषाढ़ का उन्मादी मेघ। घिरने को घिर गया है संदेह स्वप्न के। पृष्ठ पर-बाहुओं पर अंधकार फिर भी लाल है लाल अब भी श्याम से ~~अर्जित~~ अविजित[२६९]। उपर्युक्त कविता में लाल है लाल में अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ध्वनि एवं रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता है।

पर्याय पर आश्रित वक्रता का नाम पर्याय वक्रता है, समानार्थक संज्ञा शब्द के कुशल प्रयोग से उत्पन्न चमत्कार का नाम है पर्याय वक्रता, प्रत्येक भाषा में एक अर्थ के वाचक अनेक शब्द होते हैं। प्रतिभावान कवि पर्यायवाची शब्दों के प्रयोग द्वारा प्रत्येक शब्दों की आत्मा का साक्षात्कार कर काव्य में अपूर्व सौन्दर्य की उद्भावना करता है। पर्याय वक्रता पर्याय ध्वनि का रूपान्तर मात्र है। अलंकार से शोभायुक्त होने से मनोहर रचनायुक्त पर्याय अर्थात् संज्ञा शब्द से परमोत्कृष्ट पर्याय वक्रता होती है।[२७०] इसे ध्वनिवादियों ने शब्द शक्ति मूला संलक्ष्यक्रम व्यंग्य पद ध्वनि का विषय बताया है।[२७१] पर्याय शब्द वाच्यार्थ के अन्तरतम रहस्य को प्रकट करता है, तो कहीं अपने ही सौन्दर्यातिशय के कारण मनोहर होता है, कभी- कभी विशेषण के योग पाकर चमत्कार से भर जाता है। कभी पर्याय स्वयं अलंकार युक्त होता है तो कहीं की ही शोभा उसके आश्रित रहती है। ध्वनिवादियों ने इसे पर्याय ध्वनि, और अलंकारवादियों ने इसे परिकरालंकार के नाम से अभिहित किया है। उदाहरण के तौर पर शिव के शूली, पिनाकी, कपाली और इन्द्र के वज्री आदि अनेक नाम हैं। कुशल कवि प्रसंगानुकूल इसके चयन में चमत्कार

उत्पन्न कर पर्याय वक्रता का सफल प्रयोग करता है। पर्याय वक्रता के मूल में रूपक विद्यमान होता है।[१७२] अज्ञेय, धर्मवीर भारती, कुंवर नारायण, नरेश मेहता, आदि की कविताओं में इस प्रकार के प्रयोग मिलते हैं —

चांद भागा जा रहा है -
मानों कोई तपक्षीण कापालिक
साध्य-साधना की जल बुझी भारी
बची खुची राख पर धीमे पैर रखता
नीरव, चपल गति से चांद भागा जा रहा है[१७३]

उपर्युक्त पंक्तियों में कापालिक के प्रयोग से भाषा में एक विशेष प्रकार का वैचित्र्य उद्भूत होता है जिसे पर्याय वक्रता के अन्तर्गत जाना जाता है। इसी प्रकार 'हंसिनी' शब्द सीता जी के पर्याय के रूप में व्यवहृत हुआ है -

'दे न पाये छांह
हम जिस हंसिनी को
हम से श्रेष्ठ तो वे गाछ हैं।[१७४]

'चमचा' जो खाना खाने व बनाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है वह शब्द नयी कविता में कुशल कूटनीतिज्ञों का पर्याय बन गया है, जिसे हम पर्याय वक्रता का बहुत अच्छा उदाहरण कह सकते हैं -

आजादी के बाद
हमने ~~चमचा~~ चमचों की एक पूरी पीढ़ी
तैयार की है। उन्हीं के कंधों पर
देश का भविष्य टिका हुआ है।[१७५]

उपचार वक्रता गौणी लक्षणा पर आश्रित प्रयोगों को लेकर चलने वाली वक्रता शक्ति है। जिसमें प्रस्तुत में अप्रस्तुत पदार्थ के वक्रता के लिए अभिप्रेत किसी सामान्य धर्म का उपचार से आरोप किया जाता है। अतएव यह वक्रता रूपक अलंकार का बीज है।[१७६] जब प्रस्तुत पर अप्रस्तुत का अभेदारोप हो, और प्रस्तुत स्वयं निगीर्ण रहे, तब अप्रस्तुत ही प्रस्तुत का स्थानापन्न बनकर प्रतीक का काम कर देता है काव्य भाषा के इसी वैचित्र्य को उपचार वक्रता कहा जाता है। 'उपचार' विश्वनाथ के शब्दों में बिल्कुल विभिन्न दो पदार्थों के मध्य परस्पर सादृश्यातिशय की महिमा के कारण भेद-प्रतीति के स्थगन को कहते हैं।[१७७] यह गौणी लक्षणा का विषय इसलिए है कि यहां प्रस्तुत वस्तु या बोध लक्षणा द्वारा होता है। शास्त्रीय भाषा में इसे हम व्यंग्य रूपक अध्यवसित रूपक अथवा रूपकातिशयोक्ति कह सकते हैं। कुंतक ने कहा है कि इस प्रकार उपचार के प्रयोग से रूपकादि अलंकारों में सरसता आ जाती है। उपचार वक्रता को लक्षणा मूला ध्वनि के द्वितीय भेद अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ध्वनि का समानार्थी भी कहा जाता है। इस प्रकार उपचार वक्रता का विवेचन पंचम उल्लास 'भाषा का आलंकारिक वर्ण्य-वैचित्र्य' में किया जा चुका है। कुंतक ने विशेषण वक्रता और उपचार वक्रता के अन्तर्गत विशेषण सम्बन्धी अपनी स्थापनाओं को व्यवस्थित किया है उनके अनुसार जहां विशेषण के प्रभाव से कारक या क्रिया का सौन्दर्य निखरता एवं प्रस्फुटित होता है वहां विशेषण वक्रता होती है।[१७८] वामन, मम्मट, रूद्रट आदि ने विशेषणों को अलंकार के परिपोषक के रूप में महत्व दिया है। इसीलिए परिकर, एकावली आदि विशेषण मूलक अलंकार कहे जाते हैं। जिस प्रकार उपकरणों के द्वारा किसी पदार्थ का सौन्दर्य बढ़ जाता है उसी प्रकार आशय युक्त विशेषणों के प्रयोग से किसी कथन में चमत्कार का आधान, होता है, वस्तुत: इस कथन का मूलाधार विशेषण वैचित्र्य है। उदाहरण के लिए प्रस्तुत असाध्य वीणा कविता में अपने को वीणा का अंग कहकर प्रियंवद संतुष्ट नहीं होता। उसके साथ अपंग अंग विशेषण जुड़ता है —

गा तू यह वीणा रखी है : तेरा अंग अपंग

उपर्युक्त कविता में अंग अपंग इसलिए है कि अंगी की व्यापारवत्ता उससे विच्छिन्न है, फिर वीणा के लिए विशेषणों की श्रृंखला जुड़ती है।

'किंतु अंग तु अज्ञात, आत्मभरित, रसविद्
तू गा[१७९]

यहां चारों विशेषण अपने अभाव की पूर्ति के लिए वीणा को दिए जाते हैं। इनके संयोजन में भावमय आवेग के साथ वक्रता अभिव्यंजित है। 'काव्यभाषा में विशेषणों का प्राधान्य चाहे विशेषण उपवाक्यों में, चाहे समस्त पद के रूप में, चाहे बहुव्रीहि समास के रूप में, चाहे कृदन्त तत्सम या तद्भव, कृदन्त के रूप में, या चाहे पूरक विशेषण के रूप में, यह संलक्षित करता है कि काव्य के वर्णनीय विषय का हर एक चढ़ाव-उतार अपनी अलग-अलग विशिष्टता रखता है। व्यापार स्वयं विशेषण बन जाता है।[१८०]

नयी कविता में मूल विशेषणों के वैचित्र्य से नये अर्थाभिव्यक्ति की छटपटाहट स्पष्टत: परिलक्षित होती है। फलत: मूर्त और अमूर्त की श्रेणी से ऊपर उठकर कवियों ने अनेक नये प्रयोग किए हैं, जिनसे कहीं अर्थ-विस्तार हुआ है तो कहीं अर्थ संकोच तो कहीं पर अर्थ पैना अधिक हुआ है। नयी कविता में भाषा को वक्र रूप देनेवाले विशेषणों का प्रयोग ऐन्द्रिय अनुभवपरक एवं मानसिक एवं बौद्धिक अनुभव परक हुआ है। इनमें रंगवाची, आकार वाची, स्वादपरक, गंधपरक, स्पर्शगत, संख्यासूचक, कालक्रम अवस्था बोधक, तथा सामान्य विकार एवं विसंगति सूचक विशेषणों का वक्र प्रयोग हुआ है। हरा रंग विशेषण वक्रता के रूप में नये कवियों के लिए विशेष आकर्षक सिद्ध हुआ है। सामान्य भाषा में यह नवीनता और ताजगी से जुड़ा हुआ है परन्तु कविता की भाषा में इस उपयोग को और भी कई नये सन्दर्भों में

विशिष्ट अर्थ व्यक्त करने के लिये किया गया है । मुक्ति बोध ने जंगली हरी वनस्पतियों की गंध में हरे पन को संयोजित कर गंध को ठोस रूप दिया है - विगत शत पुण्य का आभास। जंगली हरी कच्ची गंध में बसकर। हवा में तैर। बनता है गहन संदेह ।[१८१] धूमिल ने सामाजिक विसंगतियों और खोखले पन को उभारने के लिए हरी आंख और डर के लिए हरा विशेषण प्रयुक्त किया है -[१८२]

उस औरत की बगल में लेटकर। मैंने महसूस किया है कि घर। छोटी-छोटी सुविधाओं की लानत से बना है, जिसके अन्दर जूता पहनकर टहलना मना है । वह घास है कि यानी हरा डर ।[१८३] डर के साथ हरा विशेषण जुड़ने से जो वैचित्र्य उद्भूत हुआ है वह विशेषण वक्रता का उदाहरण है । सूरज के उगने पर दिशाएं लाल होती हैं परन्तु जगूड़ी ने नयी पीढ़ी की क्रान्ति चेतना से जुड़कर विशेषण वक्रता के माध्यम से एक नया आयाम प्रस्तुत किया है- सूरज उगता है । जब एक नीला कंधा लाल होता है।[१८४] गुलाबी उछला हुआ सूरज झुक रहा है। दिशाओं के नील घुटनों के बीच ।[१८५] इसी प्रकार 'लाल अनुराग की लगाता आग जग में' में तुम्हारे भद्दे होठों की काली दरारों में जी रहता हूं ।[१८६] भारत भूषण और सर्वेश्वर का विशेषण वैचित्र्य देखा जा सकता है ।

नयी कविता में आयाम सूचक विशेषणों द्वारा वैचित्र्य उत्पन्न करने का प्रयास मुक्ति बोध, गिरिजाकुमार माथुर, धूमिल, सर्वेश्वर आदि कवियों ने किया है जिसमें गहरी बात, गहरी गूंज, चौड़ी हवाएं, खोखला मैदान आदि विशेषणों के वक्र प्रयोग से भाषा को गति मिली है- वसन्त आज की तनाव ग्रस्त जिन्दगी में एक खोखला मैदान लाता है ।[१८७] एक नीला दरिया बरस रहा है। और बहुत चौड़ी हवाएं हैं,[१८८] इस प्रकार के आयाम सूचक विशेषणों द्वारा नयी कविता के कवियों ने अमूर्त विशेष्य को मूर्त बनाया है जिससे विशेषणों में वैचित्र्य आना स्वाभाविक है । जगूड़ी ने ऐन्द्रिय अनुभूतियों

को अभिव्यक्त करने के लिए विशेषण वक्रता का प्रयोग किया है - जब एक प्यासा बौछिया। भीगते-भीगते भीग जाता है। तब एक चुप सिहरन। मेरी खिड़कियों पर गंध बोती है।[१८९] अज्ञेय ने स्वाद-गुण वाची विशेषणों के माध्यम से जीवन के खट्टे-मीठे अनुभवों को इन्द्रिय संवेद्य बनाया है। जिसमें स्मृतियां शीशी की तरह खण्ड-खण्ड टूट रही हैं।[१९०] इसी प्रकार सर्वेश्वर की 'फीकी बीमार रोशनी में बैठी' भी विशेषण वक्रता उदाहरण है।[१९१] स्पर्शवाची विशेषणों के माध्यम से नयी कविता के अनेक कवियों ने वैचित्र्य उत्पन्न किया है, जगूड़ी ने ठण्डे अंधेरे के संयोजित ठंडा विशेषण वर्तमान राजनैतिक माहौल की अस्थिरता एवं आम आम आदमी की तकलीफों को उजागर करता है — इस ठंडे अंधेरे में। जहां आदमी हैं ताबड़तोड़। आदमियों की तरह दुर्घटना करते हुए किसी को नहीं देखा, किसी ने अपनी मौत मरते हुए।[१९२] इस प्रकार लीलाधर जगूड़ी ने विशेषण वक्रता के माध्यम से कथ्य को धारदार बनाने का प्रयास किया है। ठंडा विशेषण खामोशी के लिए प्रयुक्त हुआ है जो वर्तमान जिंदगी के इस स्तर में व्याप्त नपुंसकता, निष्क्रियता एवं जड़ता की स्थिति को अभिव्यक्त करता है —

सीटी के बदलते प्रकार। चरमराता दरवाजा अंधेरे की आंख। ठंडी खामोशियां और फलवती होती आदिम आकांक्षाएं। आदमियों के जंगल में छिपे हुए मंदिर। पिछले पंजों से मिट्टी खोद रहे हैं। और हिलती फिर रही है लोमड़ी कुंठाओं की रोयेंदार पूंछें।[१९३] नयी कविता में गंध वाची एवं संख्यावाची विशेषणों के जरिए कवियों ने वैचित्र्य की सृष्टि की है। काव्य-भाषा में मनोभावों के साथ संख्या सूचक विशेषणों का संयोजन विशेषण-वक्रता को निखारता है जिससे मनोभाव मूर्त अनुभव परक एवं ठोस बनते हैं —

जल रहा हूं मैं। कि जैसे बांस का वन। आग है मगर दीखती नहीं। हजार बेचैनियां हैं जैसे प्रेरणा[१९४] उपर्युक्त पंक्तियों में हजार बेचैनियां संख्या-वक्रता को उभारती है। इस प्रकार कितने दिनों चार चांद, भी संख्या सूचक

विशेषण वक्रता का उदाहरण है। इस प्रकार नयी कविता के कवियों ने विशेषणों के वैचित्र्य से चमत्कार की सृष्टि की है।

कुंतक के अनुसार संवृति वक्रता वहां होती है जहां वैचित्र्य कथन की इच्छा से किन्हीं सर्वनाम आदि के द्वारा वस्तु का संवरण अर्थात् गोपन किया जाता है।[१९५] किसी अत्यन्त व्यक्ति या वस्तु का वर्णन संभव होने पर भी मर्मज्ञ कवि साक्षात् कथन नहीं करता, क्योंकि साक्षात् कथन करने से उसका सौन्दर्य सीमित रह जायेगा। यह वक्रता गोपन कला पर आधारित है, इसका मूलवर्ती सिद्धान्त है कला का उत्कर्ष जो कला की संवृति में है अनेक बार कथन की अपेक्षा संकेत का भाव अधिक होता है। व्यंजना का आविष्कार इसी सिद्धान्त के आधार पर किया गया है। नयी कविता के अधिकांश कवियों ने इस प्रकार की वक्रता का प्रयोग किया है। धर्मवीर भारती, सर्वेश्वर[१९६] और जगदीश गुप्त तो इसके सिद्ध साधक हैं। धर्मवीर भारती के तुम्हारे पांव मेरी गोद में, नायिका का गोपन किया गया है --

ये शरद के चांद से उजले धुले से पांव मेरी गोद में
ये लहर पर नाचते ताजे कमल की छांव मेरी गोद में
दो बड़े मासूम बादल, देवताओं से लगाते दांव मेरी गोद में[१९७]

इस मृत नगर में। रात दिन मैं चलता हूं। और अन्त में वहीं पहुंच जाता हूं। जहां से चलना शुरू करता हूं। उपर्युक्त कविता में वास्तविकता को छिपा लिया गया है, कवि क्रियाशील है परन्तु नगर की सड़ी गली व्यवस्थाएं उसे चलने से मना करती हैं। इसी प्रकार रघुवीर सहाय ने किसी बेकार व्यक्ति का चित्र, तथा कठिनाइयों को 'रात' और अंधेरे के माध्यम से चित्रित किया है --

एक कोने में खड़ा था अंधेरा असहाय। वहां मैं गया दूर जैसे बहुत कोई जाय। झुककर देखता हूं। एक के मुंह पर हंसी थी। हुआ ज्योंही, आंख उसने खोल दी। शाम से चुप चाप हरी गहरी रात आखिर वक्त था। उसके पिता से बोल दी।[१९९] जहां सौन्दर्य लिंग प्रयोग पर आश्रित रहता है अथवा लिंग वैचित्र्य वक्रता वहां पर होती है जहां लिंग का चमत्कार पूर्ण प्रयोग सौन्दर्य की सृष्टि करता है।[२००] शमशेर ने वसन्त को वसन्तवती, वसन्त में 'वती' प्रत्यय जोड़कर लिंग वक्रता का प्रयोग किया है।[२०१] नरेश मेहता ने भी तारों को स्त्रीलिंग में प्रयुक्त कर लिंग वक्रता का बहुत ही सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है- सांझ दिवस की पत्नी। अपने नील महल में। बैठी कात रही है बादल। दिशि की चारों क्रियाएं मांग रही हैं तारों की गुड़िया।[२०२] उपर्युक्त कविता में सांझ-दिवस की पत्नी में तथा तारों की गुड़िया में लिंग वक्रता है।

सुमन राजे की कविता में लिंग वैचित्र्य वक्रता के प्रयोग हुए हैं — गायें हो गयी बांझ। इसलिए बैल बियाते हैं।[२०३] में बैल पुल्लिंग है स्त्रीलिंग में प्रयुक्त हुआ है। कभी- कभी इसी प्रकार वैचित्र्य लाने के लिए पुल्लिंग का स्त्रीलिंग में प्रयोग कुंतक के अनुसार सौन्दर्य की सृष्टि का आधायक है।[२०४] हवा पानी, आग इत्यादि पुल्लिंग शब्द है परन्तु सौन्दर्य की सृष्टि के लिए इनका स्त्रीलिंग में प्रयोग होता है —

पर न जाने क्यों
पराजय ने मुझे शीतल किया
हर भटकाव ने मुझे गति दी
नहीं कोई था
इसी से सब हो गये मेरे
मैं स्वयं को बांटती हि फिरी
किसी ने मुझको नहीं यति दी[२०५]

उपर्युक्त पंक्तियों में 'हवा' के माध्यम से कवि ने वैचित्र्य पूर्ण प्रयोग किया है।

धातु रूप पद पूर्वार्द्ध पर आश्रित वैचित्र्य क्रिया वैचित्र्य के अन्तर्गत आता है। काव्य भाषा में जब क्रिया के द्वारा प्रस्तुत के औचित्य से रमणीयता आती है तो उसे क्रिया वैचित्र्य वक्रता कहते हैं।[२०६] क्रिया में वैचित्र्य कर्ता, विशेषण एवं उपचार की मनोज्ञता के कारण आता है।

बूंद टपकी एक नभ से। किसी ने झुककर झरोखे से। कि जैसे हंस दिया हो। हंस रही सी आंख ने जैसे किसी को कस दिया हो।[२०७] उपर्युक्त पंक्तियों में कर्ता आंख है, आंख का कसना सौन्दर्य की सृष्टि उत्पन्न करता है। आंख कसने का काम कर रही है अतः यहां पर उपचार से क्रिया वैचित्र्य वक्रता का उदाहरण हुआ। इसी प्रकार धर्मवीर भारती की कविता —

प्यार घायल सांप सा लेता लहर
अर्चना की धूप-सी
तुम गोद में लहरा गयी
ज्यों झरे केसर
तितलियों के परों की मार से[२०८]

में क्रिया वैचित्र्य वक्रता सुन्दर प्रयोग हुआ है। क्रिया के सौन्दर्य से कविता में निखार आता है तितलियों के परों की मार से केसर का झरना, वैचित्र्य की अनुपम सृष्टि की ओर संकेत करता है। 'वेश्याएं स्वर्ग में फोड़ों की तरह उत्सव फूट रहे हैं।[२०९] पत्थरों में टीसती बेचैन चुप्पियां, । दिशाओं को टटोलती फटी हुई दृष्टियां। धधकती रात, बिल्कुल पास से गुजरता मस्त हवा का एक झोंका।[२१०] में क्रिया का वैचित्र्य स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है।

३- पद परार्द्ध वक्रता और ध्वनि :

कुंतक ने पद पूर्वार्द्ध वक्रता की तरह पदपरार्द्ध वक्रता के भी आठ भेद गिनाये हैं। काल वैचित्र्य वक्रता, कारक वक्रता, वचन वक्रता, पुरुषवक्रता,

उपग्रह वक्रता, प्रत्यय वक्रता, उपसर्ग वक्रता और निपात वक्रता - इनमें से प्रत्यय, काल, कारक, वचन, उपसर्ग, निपात, को तो ध्वनिकार ने तृतीय उद्योत में असंलक्ष्य क्रम ध्वनि के अन्तर्गत उल्लेख किया है।[२११] शेष दो पुरुष और उपग्रह को 'च' अर्थात् और में गर्भित माना जा सकता है। काल, कारक, प्रत्यय आदि के जिन चमत्कारों को ध्वनिकार ने ध्वनि के भेद प्रभेदों में वर्णित किया है, उसी को कुंतक ने वस्तु निष्ठ मानकर वक्रता भेदों में समाहित कर लिया है। पद परार्द्ध वक्रता को प्रत्यय वक्रता भी कहा जाता है। कुंतक ने पद-परार्द्ध वक्रता के ६ मुख्य भेदों का ही वर्णन किया है।

कुंतक के अनुसार काल वैचित्र्य वक्रता वहां होती है जहां काल औचित्य के अनुरूप रमणीयता को प्राप्त कर लेता है।[२१२] इस प्रकार की वक्रता में चमत्कार काल विशेष के प्रयोग पर आश्रित रहता है। काल का यह विचित्र प्रयोग प्रसंग एवं परिस्थिति के अनुकूल सार्थक होना चाहिए। अन्यथा वह व्याकरण की त्रुटि मात्र होकर रह जाता है।

काल वैचित्र्य वक्रता का प्रयोग नयी कविता के अधिकांश कवियों की कविताओं में मिलता है। रघुवीर सहाय धूमिल, सर्वेश्वर ने इसका सफल प्रयोग किया है। रघुवीर सहाय की 'चढ़ती स्त्री' कविता में काल वैचित्र्य का बहुत ही सुन्दर प्रयोग हुआ है —

बच्चा गोद में लिये
चलती बस में
चढ़ती स्त्री

और मुझमें कुछ दूर तक घिसटता जाता हुआ।[२१३]

उपर्युक्त कविता में प्रथम तीन पंक्तियों में तीन स्थितियों का चित्र प्रस्तुत किया

'बच्चा गोद में लिये' 'चलती बस में' और 'चढ़ती स्त्री' ये तीनों चित्र निरीह स्त्री की विपन्नता, एवं असुरक्षा की बड़ी ही तीखी अभिव्यंजना करते हैं। चौथी पंक्ति जिसमें कवि को उस स्त्री के प्रति कुछ न कर पाने की छटपटाहट है जो उसे साल रही है, वह उसी घटना को सोचता चला जा रहा है में घिसटता जाता हुआ भविष्यत् कालिक क्रिया पद, चमत्कार का आधार है। कभी- कभी ऐतिहासिक वर्तमान में भूतकालिक घटना का वर्तमान कालिक क्रियाओं द्वारा वर्णन कर सजीवता एवं सौन्दर्य की सृष्टि की जाती है —

और एकसा मैंने पाया कि मैं खुद अपने सवालों के।सामने खड़ा हूं और ।उस मुहावरे को समझ गया हूं। जो आजादी और गांधी के नाम पर चल रहा है। जिससे न भूख मिट रही है। न मौसम बदल रहा है।[२१४]

उपर्युक्त पंक्तियों की अर्थ-व्यंजना काल वैचित्र्य पर आधारित है।

कुंतक के अनुसार कारक वक्रता वहां होती है जहां सामान्य कारक का मुख्य रूप से और मुख्य का सामान्य रूप से कथन कर तथा कारकों का विपर्यय कर अर्थात् कर्ता को कर्म या करण का रूप देकर, कर्म या करण को कर्ता का रूप देकर प्रतिभावान कवि अपनी उक्ति में एक अपूर्व चमत्कार उत्पन्न कर देता है।[२१५] कारक वैचित्र्य धूमिल की कविताओं में बहुतायत रूप से मिलता है -'लो, यह रहा तुम्हारा चेहरा।यह जुलूस के पीछे गिर पड़ा था। 'हर एक तरफ ताले लटक रहे हैं, मैं देख रहा हूं रशिया मैदायें हाथों की मक्कारी ने विस्फोटक सुरंगें बिछा दी हैं। टांपी से उठी हुई आंखों ने मुझे क्षण भर टटोला, जूता क्या है- चकतियों की थैली है, इसे एक चेहरा पहनता है, आंख कहीं जाती है, हाथ कहीं जाता है,[२१६] बेटा,।भुजाएं ये तुम्हारी।पराक्रम भरी। थकी तो नहीं। अपने बन्धु जनों का। वध करते करते ?-----[२१७]

संख्या एवं वचन वक्रता वहां होती है जहां कविता में वैचित्र्य उत्पन्न

करने के लिए संख्या अर्थात् वचन का विपर्यास किया जाता है।[२१८]

मैंने उसका हाथ पकड़ते हुए कहा-
'बच्चे तो बेकारी के दिनों की बरकत है
इससे वे भी सहमत हैं। जो हमारी हालत पर
तरस खाकर, खाने के लिए। रसद देते हैं,
उनका कहना है कि बच्चे
हमें बसंत बुनने में मदद करते हैं।[२१९]

उपर्युक्त पंक्तियों में मैं एक वचन के स्थान पर हम बहुवचन का प्रयोग किया गया है। वचन विपर्यास के कारण यहाँ पर वचन वक्रता है। इसी प्रकार 'मैं अपनी ठंडी मांस पेशियों को विदेशी मुद्रा में ढाल रहा हूं, उस वक्त रास्ता नहीं होता जब हमारे भीतर तरबूज कट रहे हैं।[२२०] मुद्रा के स्थान पर बहुबचन मुद्राओं, और हम की जगह मैं होना चाहिए था, उपर्युक्त पंक्तियों में सौन्दर्य की सृष्टि के लिए कवि ने वचन वक्रता का सहारा लिया है।

कविता में पुरुष वक्रता वहाँ होती है जहाँ सौन्दर्य के लिए उत्तम-पुरुष और मध्यम पुरुष का विपरीत रूप से प्रयोग होता है।[२२१] काव्य-भाषा में सौन्दर्य की अभिव्यंजना के लिए उत्तम और मध्यम पुरुषों के स्थान पर अन्य पुरुष का प्रयोग किया जाता है - और अन्य पुरुष के स्थान पर उत्तम और मध्यम पुरुष का प्रयोग किया जाता है —

तुम धूल हो
बेचैन हवा के साथ उठो
आंधी बन
उनकी आंखों में पड़ो
जिनके पैरों के नीचे हो[२२२]

सर्वेश्वर की उपर्युक्त पंक्तियों में तुम से तात्पर्य समाज के शोषित दलित वर्ग से है, अन्य पुरुष का प्रयोग न कर कवि ने प्रथम पुरुष से अर्थ की व्यंजना को उभारने का प्रयास किया है। अत: उपर्युक्त पंक्तियां पुरुष वक्रता का उदाहरण है। 'बाबू जी! सच कहूं- मेरी निगाह में। न कोई छोटा है न कोई बड़ा है। मेरे लिए हर आदमी एक जोड़ी जूता है, तब आप कहो----! इस ससुरी कविता को जंगल से जनता तक ढोने से क्या होगा? आप जवाब दो मैं इसका क्या करूं?[२२३] उपर्युक्त पंक्तियों में, बाबू जी, आप कहो, मैं पुरुष वैचित्र्य की सृष्टि हुई है। उपग्रह का अर्थ है धातुपद संस्कृत में धातुओं के दो पद होते हैं परस्मै और आत्मने पद, काव्य की शोभा के लिए दोनों पदों में से औचित्य के कारण किसी एक पद का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के प्रयोग से जो वैचित्र्य उत्पन्न होता है उसे उपग्रह वक्रता कहते हैं।[२२४] अपने रूढ़ रूप में उपग्रह का चमत्कार संस्कृत में ही संभव हो सकता है फिर भी इस प्रकार के कर्म-कर्तृ प्रयोगों का हिन्दी में अभाव नहीं है।[२२५] इस प्रकार वक्रता का अध्ययन पंचम परिच्छेद में मुहावरों के प्रयोग में किया जा चुका है। धूमिल ने राज में 'सु' उपसर्ग लगाकर 'सुराजिये' शब्द के प्रयोग से उपसर्ग वक्रता का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है —

मगर चालाक 'सुराजिये'
आजादी के बाद के अंधेरे में
अपने पुरखों का रंगीन बलगम
और गलत इरादों का मौसम जी रहे थे।[२२६]

इसी प्रकार 'भीड़ बढ़ती रही। चौराहे चौड़े होते रहे। लोग अपने-अपने हिस्से का अनाज खाकर-निरापद भाव से। बच्चे जनते रहे। योजनाएं चलती रहीं। बंदूकों के कारखानों में जूते बनते रहे, में उपग्रह का वैचित्र्य प्रस्तुत किया गया है।

प्रत्यय वक्रता वहां होती है जहां मर्मज्ञ कवि प्रत्यय प्रयोगों से भिन्न दिशा में एक प्रत्यय में दूसरा प्रत्यय लगाकर अपूर्व सौन्दर्य एवं चमत्कार की सृष्टि करता है। इसी को कुंतक ने स्वतन्त्र रूप से प्रत्यय वक्रता का नाम दिया है।[२२७] मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में इस प्रकार के प्रयोग बहुत अधिक प्रचलित रहे- जैसे- संदेश-संदेसड़ा, छइल-छइलवा, गवन-गवनवां आदि। शमशेर ने वसन्त में वती प्रत्यय लगाकर प्रत्यय वैचित्र्य का प्रयोग किया है — हे वसन्तावती। द्वार के नभ पर तुम्हारे झुका जो हेमन्त का सिरभार।[२२८] कीर्ति चौधरी ने `हरिमायै` शब्द के प्रयोग से प्रत्यय वक्रता का बड़ा ही सुन्दर नमूना प्रस्तुत किया है।[२२९]

इसी प्रकार राजेन्द्र किशोर ने रहित, और तरल में ता प्रत्यय के योग से प्रत्यय वक्रता का प्रयोग किया है- खुली आंखों की सचेतन दृष्टि रहितता। रोमांचों पर तिरती हुई जल की तरलता। जल भी नहीं मात्र तरलता।[२३०] नयी कविता कवियों ने गुराजिए, कुनमुनाना, कंकुवाना, ठुल्ड़ा, खूनना, ललाती, चकोटना आदि प्रत्यय शब्दों द्वारा वैचित्र्य की सृष्टि की है। श्रीराम वर्मा ने हरा से हरिहर, पानी से पनियर प्रत्यय शब्दों का प्रयोग किया है।[२३१] कुंतक के अनुसार प्रत्यय वक्रता का दूसरा भेद शब्द वक्रता है जो रचना सौन्दर्य को उद्दीप्त करनेवाला है।[२३२] सर्वेश्वर धूमिल एवं मदन वात्स्यायन की कविताओं में शब्द वक्रता के बहुत ही सुन्दर प्रयोग हुए हैं। मदन वात्स्यायन द्वारा `टसकना` शब्द का प्रयोग इसका बड़ा ही सुन्दर उदाहरण है। अफसरों से भरा हुआ सरकारी कारखाना। सांपों से भरी कोठरी है-आंखें नहीं झपकतीं। अफसरों से भरा हुआ सरकारी कारखाना बबूल का घना वन है- पांव नहीं टसकते।[२३३]

कुंतक के अनुसार निपात के कारण भी काव्य भाषा में वैचित्र्य का

होना संभव है ।[२३४] निपात से तात्पर्य उन अव्ययों से है, जो अवयव रहित, अव्युत्पन्न होते हैं कुशल कवि चमत्कार की सृष्टि के लिए इन अव्ययों के सहारे वैचित्र्य की सृष्टि करता है । निपात अर्थ के द्योतक होते हैं वाचक नहीं। हा, हि, हू, ता, तो, यही, आह, धिक्, पुं, आदि शब्द अजाननक कवि द्वारा प्रयुक्त होकर कविता में चमत्कृति आधायक होते हैं —

क्योंकि आजकल मौसम का मिजाज यूं है। कि खून में उड़नेवाली पत्तियों का पीछा करना लगभग बेमानी है ।[२३५]

उपर्युक्त पंक्तियों में युं शब्द में वैचित्र्य विद्यमान है यह निपात वक्रता का उदाहरण हुआ । इसी प्रकार 'और तुम कर भी क्या सकते हो' में 'भी' में निपात वक्रता है।[२३६] भारत भूषण अग्रवाल ने भी निपात का बड़ी सशक्त नमूना प्रस्तुत किया है- 'नहीं प्यार वह फल नहीं। जो अपने आप उगा । मुस्कराया और झर गया, हंसकर एकदिन जो अमृत से भर गया। प्यार तो वह घाव है। जो गड्ढे में गिरकर मुझे मिला है[२३७]। उपर्युक्त पंक्तियों में प्यार तो वह घाव है में 'तो' निपात वक्रता । का उदाहरण है ।

४- वस्तु वक्रता एवं वस्तु ध्वनि :

कुंतक ने वस्तु का उत्कर्ष युक्त स्वभाव से सुन्दर रूप में केवल सुन्दर शब्दों द्वारा होनेवाले वर्णन को अर्थ या वाच्य की वक्रता माना है ।[२३८] कुंतक के अनुसार वाच्य वक्रता का दूसरा नाम ही वस्तु वक्रता है । कुंतक ने तृतीय उन्मेष के प्रारम्भ में प्रस्तुत विषय का विवेचन किया है । कुंतक के अनुसार वस्तु की सहज और आहार्य भेद से दो प्रकार की वक्रता उद्भूत होती है ।सहज का अर्थ है सहज शक्ति द्वारा उत्पन्न वक्रता, आहार्य का अर्थ है व्युत्पत्ति तथा शिक्षाभ्यास द्वारा अर्जित वक्रता। इस प्रकार वाच्य, वाच्य या वस्तु वक्रता के

के दो भेद हुए पदार्थ की स्वाभाविक शोभा का वर्णन जिसे स्वभावोक्ति के नाम से जाना जाता है कुंतक के अनुसार यह 'स्वभावोक्ति, अलंकार्य है।[२३६] कुंतक की वस्तु वक्रता और आनन्द वर्द्धन की वस्तु ध्वनि यद्यपि एक ही है सिर्फ अन्तर इस बात का है कि कुंतक वस्तु सौन्दर्य का प्रतिपादन वाच्य रूप में ही सम्भव मानते हैं किन्तु आनन्द वर्द्धन उसे व्यंग्य रूप में ही महत्व देते हैं। कुंतक के अनुसार वाक्य वक्रता के हजारों प्रकार हो सकते हैं जिसमें समस्त अर्थालंकारों को समाहित किया जा सकता है।[२४०] यद्यपि अर्थालंकारों का सौन्दर्य वाच्य पर आश्रित होते हुए भी अलंकार ध्वनि के अन्तर्गत नहीं आता परन्तु कुंतक ने रूपक, व्यतिरेक आदि को कतिपय अलंकारों का प्रतीयमान रूप माना है ये प्रतीयमान अलंकार, निश्चय ही अलंकार ध्वनि से जुड़े हुए हैं। कुंतक का प्रतीयमान रूपक और आनन्द वर्द्धन की रूपक ध्वनि एक ही चीज है और दोनों के उदाहरण भी वही है। इस प्रकार वाक्य वक्रता के प्रतीयमान भेदों में अलंकार ध्वनि की स्पष्ट झलक है और अलंकार ध्वनि के अन्तर्गत वाक्य-वक्रता के प्रतीयमान भेदों को समाहित किया जा सकता है।

ध्वनिकार के अनुसार 'जिस काव्य में अलंकार शब्द शक्ति से प्रकाशित होता है, वह शब्द शक्त्युद्भव ध्वनि, और जिसमें अर्थ शक्ति से प्रकाशित होता है वह अर्थ शक्त्युद्भव ध्वनि और जहां दोनों से आक्षिप्त कवि चमत्कार की सृष्टि करता है वह व्यंग्य ध्वनि से और ही अलंकार है।[२४१] इस प्रकार वाक्य एवं वस्तु वक्रता तथा वस्तु ध्वनि एवं अलंकार ध्वनि का विवेचन पंचम् परिच्छेद 'नयी कविता : भाषा का आलंकारिक वर्ण्य वैचित्र्य' में किया जा चुका है।

५- प्रकरण वक्रता एवं प्रबन्ध वक्रता तथा प्रबन्ध ध्वनि :

कुंतक ने वर्णों से लेकर प्रबन्ध तक वक्रता की महत्ता स्वीकार की है।

वर्णों से प्रकृति, प्रत्यय, पदपूर्वार्द्ध तथा पद-परार्द्ध का निर्माण होता है और पदों से वाक्यों का। वक्रता के प्रभाव क्षेत्र का विस्तार करते हुए कुंतक ने वर्णों के पश्चात् प्रकृति प्रत्यय और इसके पश्चात् वाक्य वक्रता का विवेचन किया है। वाक्य वक्रता के पश्चात् प्रकरण एवं प्रबन्ध नामक जिन दो वक्रता प्रकारों का उल्लेख किया है वह महाकवियों के प्रबंधों, महाकाव्यों, एवं खण्ड काव्यों में विद्यमान होती हैं। प्रकरण का अर्थ कुंतक के अनुसार प्रबन्ध का एक देश अर्थात् कथा का एक प्रसंग है। समग्र कथा विधान का नाम प्रबन्ध है और उसके अंग अथवा प्रसंग का नाम प्रकरण है। प्रकरण में निहित अथवा प्रकरण पर आश्रित काव्य चमत्कार प्रकरण वक्रता है। जहां किसी प्रसंग विशेष के उत्कर्ष से सम्पूर्ण प्रबन्ध उज्वल हो उठता है वहां प्रकरण वक्रता होती है अर्थात् सम्पूर्ण प्रबन्ध को दीप्त एवं चमत्कृत करने वाला प्रसंग प्रबन्ध के एक देश का चमत्कार है, सामान्य रूप में स्थिति के सजीव चित्रण को ही कुंतक ने प्रकरण वक्रता माना है और इससे प्रबन्ध में जो निखार और सजीवता आती है वह प्रबन्ध वक्रता है। आनन्द वर्द्धन ने इसे ही प्रबन्ध ध्वनि के नाम से स्वीकार किया है।[२४२]

प्रबन्ध वक्रता का विवेचन करते हुए कुंतक ने इसे वस्तु परक दृष्टि से कवि के प्रतिभा कौशल का प्रकार माना है, वहीं पर आनन्द वर्द्धन ने इसे रसानुभूति परक माना है कवि प्रतिभा की वस्तुगत अभिव्यक्ति का नाम है वक्रता[२४३]। कवि की प्रतिभा की अनन्तता के साथ वक्रता की भी अनन्तता स्वत: सिद्ध है। कवि की प्रतिभा न जाने किस प्रसंग में किस प्रकार की नूतन कल्पना या नये चमत्कार की सृष्टि कर सकती है।[२४४] इस प्रकार नये नये उपायों से सिद्ध होनेवाले नीति मार्ग का उपदेश करने वाले महाकवियों के सभी प्रबंधों में वक्रता अथवा सौन्दर्य निहित रहता है। एक ही कथा पर आधारित काव्य

अपने अन्यार्थ के भेद से परस्पर भिन्न हो सकते हैं। नयी कविता के प्रबन्ध काव्यों में इसी प्रकरण एवं प्रबंध वक्रता का चमत्कार निहित है। महाभारत, रामायण, उपनिषद् आदि से मूलकथा का आश्रय लेकर नयी कविता के कवियों ने अपनी प्रतिभा एवं चमत्कार के बल से एक दूसरे से सर्वथा विलक्षण प्रबन्ध-काव्य, नाट्य काव्यादि की रचना की है। इन काव्य, नाटकादि की आधारभूत कथा एक होती है, परन्तु इन सभी का मूल उद्देश्य आनन्द वर्द्धन के शब्दों में अन्यार्थ या व्यंग्यार्थ से सर्वथा भिन्न होता है और इसी के कारण इनका काव्य सौन्दर्य भी एक दूसरे से विलक्षण होता है।

नयी कविता के कवियों पुराण इतिहास के तिरस्कृत प्रसंगों एवं घटनाओं को लेकर मिथकीय शैली के माध्यम से आधुनिक संदर्भों से जोड़ने का प्रयास किया है। नयी कविता के जिन प्रबन्ध काव्यों में प्रकरण एवं प्रबन्ध-वक्रता विद्यमान है वे हैं - अंधायुग, संशय की एक रात, महाप्रस्थान, आत्मजयी, एक कंठ विषपायी, एक पुरुष और आदि। प्रकरण वक्रता के जिन प्रमुख तत्वों का उल्लेख कुंतक ने किया है वे हैं — भावपूर्ण स्थिति की उद्भावना, उत्पाद्य लावण्य, प्रधान कार्य से सम्बद्ध प्रकरणों का उपकार्य-उपकारक भाव, विशिष्ट प्रकरण की अतिरंजना।

ऐतिहासिक कथावस्तु में कवि अपनी कल्पना के द्वारा कुछ ऐसे सुन्दर परिवर्तन कर देता है कि समस्त प्रबन्ध उससे दीप्त हो उठता है। कभी-कभी इन्हीं ऐतिहासिक घटनाओं को लेकर नवीन प्रसंगों की उद्भावना करता है जिससे काव्य का उत्कर्ष होता है। कभी- कभी अर्थ परिवर्तन के द्वारा अन्यार्थ की प्रतीति कराता है कभी- कभी एक ही अर्थ कवि की प्रौढ़ प्रतिभा से आयोजित होकर अलग-अलग प्रकरणों से बार-बार निबद्ध होकर, बिल्कुल नये रस अलंकारों से युक्त आश्चर्य जनक वक्रता शैली को उत्पन्न करते हैं।[२४५] कभी- कभी प्रधान उद्देश्य की सिद्धि के लिए कवि किसी सुन्दर ~~उद्देश्य-की~~ किन्तु अप्रधान प्रसंग की अवतारणा कर समग्र कथा में एक वैचित्र्य उत्पन्न कर देता है।[२४६] कथा समान

होने पर भी अपने- अपने गुणों से काव्य,नाटकादि प्रबन्ध पृथक- पृथक होते हैं जैसे प्राणों के शरीर में समान होने पर भी उनके अपने- अपने गुणों से भेद होते हैं।

'अंधायुग' की कथावस्तु में पर्याप्त नवीनता है, धर्मवीर भारती ने 'अंधायुग' के माध्यम से आधुनिक अंधी संस्कृति को उजागर करने का प्रयास किया है। कथावस्तु में आयी घटनाएं किसी न किसी रूप में आधुनिक मूल्यों, मान्यताओं और विसंगतियों को व्यंजित करती है। पूरा प्रबन्ध प्रतीकों से भरा पड़ा है। प्रत्येक पात्र आज की उदासीनता, निरर्थकता, मूल्यहीनता और अंधी संस्कृति के प्रति उत्पन्न वितृष्णा, पद, वैभव, सत्ता, अव्यवस्था, टूटती मर्यादा और ध्वस्त मूल्यों को प्रकारान्तर से उद्घाटित करते हैं।

सत्ता के मद में डूबी संस्कृति, स्वार्थ लोलुप शक्तियों का साम्राज्य, अफसरशाही, आदि को ऐतिहासिक कथा के माध्यम से एक नया आयाम दिया गया है। अश्वत्थामा की बर्बरता, धृतराष्ट्र का अन्धत्व, गांधारी की मोहान्धता आज की सामंतशाही को उभारते हैं। अंधायुग की कथावस्तु प्रख्यात होते हुए भी उत्पाद्य लावण्य से युक्त है। वृद्ध याचक और गूंगा भिखारी कल्पित पात्र हैं जो आधुनिक संवेदना उजागर करते हैं। अंधायुग की सम्पूर्ण वस्तु प्रकरण वक्रता से युक्त है। व्यंग्यार्थ से इस प्रबंध के पात्र आधुनिक जीवन के रहस्य को उभारते हैं तथा इस अन्यार्थ की प्रतीति कराने के कारण प्रबन्ध ध्वनि अथवा प्रबन्ध वक्रता से भरापूरा यह 'अंधायुग' एक सफल प्रबन्ध है काव्य है। इसी प्रकार 'आत्मजयी' में कुंवरनारायण ने 'कठोपनिषद' के आख्यायन में बहुत कुछ परिवर्तन अपनी कल्पना शक्ति के आधार पर किया है। 'आत्मजयी' में महाभारत के 'उद्दालक मुनि', को ऋषि के बजाय एक राजा के रूप में चित्रित किया गया है —

तुम भी एक प्राणी हो। सबकी तरह समय के बने। जिसे सिंहासन एक भूमिका देता है। मुकुट एक शीर्षक। सेना एक कर्तव्य। स्वार्था एक धर्म। सभासद एक दायित्व।[२५७] इस प्रकार आधुनिक जीवन के चिंतन पर कवि ने मौलिक उद्भावनाएं,

Kaipoas'c

नवीन स्थापनाएं, नयी दृष्टि दी है। आत्मजयी में कवि ने आधुनिक ,राजनैतिक, विसंगतियों को भी उभारने का प्रयास किया है। सम्पूर्ण प्रबन्ध प्रकरण एवं प्रबन्ध वक्रता का उदाहरण है। इसी प्रकार `एक कंठ विषपायी` में दुष्यन्त-कुमार ने प्रकरण वक्रता एवं प्रबन्ध कौशल के सहारे शिवपुराण और महाभारत के प्रसंगों को तालमेल के साथ आधुनिक संदर्भों में जोड़ने का प्रयास किया है। `एक कंठ विषपायी` में शंकर सती के शव के साथ परम्पराओं को ढोते हैं और अहंकारी देवों को चुनौती देते हैं, आज के अर्थहीन परम्पराओं से जुड़े आदमी की कोटि में आ खड़े होते हैं। इस प्रकार दुष्यन्त कुमार प्रस्तुत प्रबन्ध में आज की रूढ़ियों और परम्परागत शव से चिपटे हुए लोगों की प्रतीकात्मक प्रस्तुति आधुनिक पृष्ठभूमि और नये मूल्यों के स्तर पर की है। साथ- साथ आधुनिक, राजनैतिक विसंगतियों[२४८], भ्रष्टाचार एवं घूसखोरी को भी उभारा गया है -- दुनिया में सब भूखे होते हैं। सब भूखे-----। कोई अधिकार लिप्सा का। कोई प्रतिष्ठा का। कोई आदर्शों का। और कोई धन का भूखा होता है। ऐसे लोग अहिंसक कहलाते हैं। मांस नहीं मुद्रा खाते हैं।[२४९] इस सम्पूर्ण प्रबन्ध का अवलोकन करने से साफ स्पष्ट हो जाता है कि प्रकरण एवं प्रबन्ध वक्रता का विन्यास है। इसी प्रकार संशय की एक रात में भी नवीन प्रसंगों की उद्भावना हुई। कवि ने कल्पना कौशल से राम को संशयग्रस्त बताया है और आधुनिक प्रज्ञा के प्रतीक रूप में चित्रित किया है। राम के संशय के माध्यम से कुछ मूलभूत आवश्यक प्रश्नों की उद्भावना हुई है। इस प्रकार इस प्रबन्ध में एक नया प्रश्न, नये मूल्यों की खोज जिसमें सम्पूर्ण मानवता को आज के सन्दर्भ में सार्थकता प्रदान की गयी है। राम को आधुनिक वैचारिक धरातल पर प्रतिष्ठित करते हुए उनके संशय को आज के व्यक्ति के आन्तरिक संघर्ष को मानवीय सन्दर्भ से जोड़ने का प्रयास किया है जिससे यह प्रबन्ध प्रकरण एवं प्रबन्ध वक्रता का उदाहरण सिद्ध होता है। इसी प्रकार डा० विनय का भी `एक पुरुष और` भी ऐसी प्रबन्ध कृति है जिसमें महाभारत में वर्णित विश्वामित्र और मेनका प्रसंग को समसामयिकता के

स्तर पर जोड़ते हुए कवि ने कथात्मक शैली से परे प्रतीकात्मक शैली को अपनाते हुए कृति को प्रबन्ध का रूप दिया है । कवि ने पौराणिक सन्दर्भ को आधुनिक बोध से जोड़ने का प्रयास किया है । विश्वामित्र को एक संघर्षशील व्यक्ति के रूप में और मेनका को यन्त्रणा युक्त नारी के रूप में प्रस्तुत करके कवि ने आधुनिक युगीन समस्या को उभारा है । मेनका व्यवस्था द्वारा एक पीड़ित एवं प्रताड़ित नारी है जिसका व्यक्तित्व छीन लिया गया है । डा० विनय ने विश्वामित्र के जीवन को विद्रोही रूप, राजा रूप और तपस्वी रूप तीन अलग-अलग रूपों में वर्णित किया है । विश्वामित्र आत्म-ग्लानि या अपराध न महसूस कर आत्मा से मेनका का वरण करते हैं । प्रस्तुत प्रबन्ध में डा० विनय ने आधुनिक युग की विसंगतियों और संकट एवं संघर्ष से जूझते हुए, साथ ही साथ सामाजिक मूल्यों से टकराते हुए व्यक्ति का चित्र खींचा है - न जाने क्या हुआ मेरे युग को। कि कटता रहा आदमी से आदमी। जुड़ती रही भीड़ जनपथों पर। अधिकार मांगने की मुद्रा में। शताब्दी का पानी नालियों में बह गया - - - टूटते रहे लोग अन्दर से बाहर। और प्रार्थनाएं कुछ जड़ हो गयीं। दु:खान्त स्थितियों में एक गाथ ।[२५०] इस प्रकार सम्पूर्ण वर्ण्य प्रबन्ध उत्पाद्य लावण्य से युक्त प्रकरण वक्रता, ध्वन्यार्थ से प्रबन्ध वक्रता एवं प्रबन्ध ध्वनि का उदाहरण हुआ ।

वक्रता के नये आयाम :

जिस प्रकार ध्वनिकार ने ध्वनि की सत्ता भाषा के सूक्ष्म से सूक्ष्म अवयवों, सुप्-तिङ्, विभक्ति, कारक, कृदन्त, तद्धित, समास, उपसर्ग, निपात और काल आदि प्रकृति-प्रत्यय में स्वीकार किया है उसी प्रकार कुंतक ने भी विशेषण, वृत्ति, संवृति, लिंग, कारक, वचन, पुरुष, उपसर्ग, उपग्रह, प्रत्यय आदि भाषा के सूक्ष्म से सूक्ष्म तत्वों में वक्रता की सत्ता स्वीकार की है । इन दोनों आचार्यों ने वक्रता तथा ध्वनि के विस्तृत एवं व्यापक वर्णन से

भाषा के सूक्ष्म से सूक्ष्म अवयवों को समाहित कर लिया है।[२५१] इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि ये काव्य तत्त्व निर्धारक सिद्धान्त नयी कविता की कसौटी के लिए पूर्णतया: सक्षम हैं। कविता चाहे हजारों साल पहले की हो चाहे हजारों साल बाद रची जानेवाली हो उसका विवेचन-विश्लेषण इन दोनों सिद्धान्तों के आधार पर किया जा सकता है। प्रत्येक पीढ़ी नयी काव्य प्रवृत्तियों को जन्म देती है और प्रत्येक कवि अपनी कविता में चमत्कार की सृष्टि के लिए नया प्रयोग करना चाहता है। कवि की कृति का नयापन उसकी भाषा के नयेपन में परिलक्षित होता है। निरन्तर प्रयोग से भाषा का वैचित्र्य एवं व्यंजकता घिसकर अभिधा के स्तर पर आ जाती है। उसकी रागोत्तेजक शक्ति क्षीण हो जाती है। प्रत्येक नया कवि शब्दों के सुगत प्रयोग से उसे एक नया ढर्रा दिखाता है। नये- नये तौर तरीकों से काव्य भाषा में वैचित्र्य एवं वक्रोक्ति की सत्ता स्थापित की जाती है। लक्ष्मीकान्त वर्मा का कहना है कि किसी भी जीवित साहित्य का साहित्यशास्त्र भी साहित्य के साथ-साथ बदलता रहता है। यह बदलने की प्रक्रिया स्वस्थ, गतिशील, जीवन्त एवं जागरूक चेतना की परिचायक है, जिस भाषा का व्याकरण जड़ हो जाता है वह भाषा मर जाती है। जिस साहित्य का साहित्य शास्त्र जड़ हो जाता है वह साहित्य मर जाता है।[२५२] शब्दों में निहित अर्थ या निहित अर्थ से अतिरिक्त अर्थ पाने की लालसा ही कवि को नये वैचित्र्य प्रयोग की ओर निर्दिष्ट करती है। कवि व्यंजना एवं वक्रता की नवीन प्रणालियों को ढूंढता है और व्यंजना भाषा की साधारण अर्थ-विधायिनी शक्ति की सहायता करती है। कुंतक के अनुसार यही विचित्र मार्ग होता है जहां पुराने कवियों द्वारा वर्णित अनूतनोल्लेख वस्तु के उक्ति वैचित्र्य मार्ग से ले जाये जाने पर एक नया विचित्र मार्ग होता है जहां वाच्य वाचक से भिन्न किसी अनिर्वचनीय वाक्यार्थ प्रतीयमानता अर्थात् व्यंग्यरूपता की रचना की जाती है।[२५३] अज्ञेय का

Kalpana's

कहना है कि 'यह क्रिया भाषा में निरन्तर होती रहती है और भाषा विकास की एक अनिवार्य क्रिया है, चमत्कार मरता रहता है और चमत्कारिक अर्थ अभिधेय बनता रहता है या कहें कि कविता की भाषा निरन्तर गद्य की भाषा हो जाती है। इस प्रकार हमेशा कवि के सामने चमत्कार के सृष्टि की समस्या बनी रहती है, वह शब्दों को नया संस्कार देता चलता है और ये संस्कार प्राय: सार्वजनिक मानस में बैठकर फिर वैसे हो जाते हैं। चमत्कारिक अर्थ मर जाता है और अभिधेय बन जाता है उस शब्द की रागोत्तेजक शक्ति क्षीण हो जाती है उस शब्द से रागात्मक सम्बन्ध नहीं स्थापित हो पाता तब कवि उस अर्थ की प्रतिपत्ति करता है जिससे पुन: राग का संचार हो, पुन: रागात्मक सम्बन्ध स्थापित हो।[२५४] बदलती हुई काव्य संवेदना, आधुनिक वैज्ञानिक बोध, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, तथा मनोविज्ञान एवं जटिल परिस्थितियों के प्रभाव से कवियों ने आनन्द वर्धन, कुंतक द्वारा निर्धारित निर्माणक तत्वों से दो कदम आगे बढ़कर एक नया दृष्टिकोण कायम किया जो कुंतक की वक्रता का ही अंग है परन्तु वह उससे बहुत आगे है। आज की सबसे बड़ी समस्या है साधारणीकरण और कम्युनिकेशन की। आज का कवि यह अनुभव करता है कि पुराना व्यापकत्व उसमें नहीं है, शब्दों के साधारण अर्थ से बड़ा अर्थ वह भरना चाहता है। पर उस बड़े अर्थ को पाठक के मन में उतार देने के साधन अपर्याप्त नहीं हैं। अज्ञेय के अनुसार 'भाषा की क्रमश: संकुचित होती हुई सार्थकता की केंचुल फाड़कर उसमें नया, अधिक व्यापक, अधिक सारगर्भित अर्थ भरना चाहता है और फिर इस सारगर्भित अर्थ भरने की ललक लिए, अपनी स्वानुभूति को व्यापकत्व प्रदान करने के लिए कभी वह फैंटेसी का सहारा लेता है, कभी मिथकों के माध्यम से अपनी बात सम्प्रेषित करना चाहता है। कभी बिम्बों की सृष्टि करके अपने को अभिव्यक्त करता है। कभी

प्रतीकों का दामन पकड़ता है और कभी आड़ी-तिरछी लाइनों, छोटी- बड़ी पंक्तियों, बिन्दुओं की अनन्तहीन श्रृंखला(o o o o o o o o o o o o o o o o o o) सही बटे की गणितीय प्रणाली विराम संकेतों, प्रश्नवाचक चिन्हों, अधूरे वाक्यों, टाइप के छोटे-बड़े आकारों, चौखटों एक ही शब्द के वर्णों - परिवर्तनों तथा शब्दों की पुनरावृत्ति आदि अनेक तरीकों से अपनी अनुभूति को सामाजिकता प्रदान करता है।[२५५] छन्दों के तुकांत अतुकांत रूपों का प्रयोग, शब्दों की, पंक्तियों की या अर्द्ध पंक्तियों की पुनरावृत्ति या शब्द समूहों की पुनरावृत्ति, शब्दों के लघुकिरण और दीर्घीकरण की मितकथन एवं स्फीत कथन की प्रवृत्ति नयी कविता में मिलती है। डा० कैलाश वाजपेयी का कहना है कि स्वच्छन्दता और परम्परा शून्यता के कारण इस युग की रचनाओं में अनेक विकृतियां आ गयी हैं, छन्द की बात तो दूर रही, मुक्त छन्दों में लय तक का निर्वाह भी यह कवि न कर सके क्रियापदों और विशेषणों के मनमाने प्रयोग, पद विशृंखलता, गद्यात्मक वाक्य विन्यास, ह्रासोन्मुख कल्पना चित्रण, अश्लीलता, सुरुचिहीनता और अस्वस्थ विचार धारा आदि अनेकानेक दोषों के कारण प्रयोगवाद की उपलब्धियां ऊपर नहीं आ सकीं।[२५६] वस्तुत: नयी-कविता के कवियों ने अर्थवत्ता और व्यंजकता को बढ़ाने के लिए भाषा के अनेक वक्रता सम्बंधी प्रयोग किये। इसी क्रम में उन्होंने व्याकरण के नियमों का उलंघन किया। आड़ी तिरछी रेखाओं का प्रयोग किया। संकेत एवं विराम चिन्हों का प्रयोग किया, क्रियार्थक संज्ञाओं के निर्माण के साथ-साथ विदेशी और जनभाषा की शब्दावली व्यवहृत की। वक्रता के नये अभिनव प्रयोगों में इन कवियों ने त्रिकोण, त्रिभुज, रेखा, चित्र, कोष्ठ, ह्रस्व-दीर्घ चिन्ह, वर्गमूल, चूंकि, इसलिए, आदि गणितीय एवं ज्यामितीय चिन्ह, क्रयात्मक चिन्ह, सूनी रेखाएं इत्यादि आदि के द्वारा भावों की अभिव्यक्ति की। कविता कहीं अंकगणित, बीजगणित, रेखा गणित से छन्द के क्षेत्रों में सहारा लेने लगी, कहीं संगीत-

लहरियों में लघु गुरु मात्राओं की । प्रभाव के सम्प्रेषण एवं उलझी हुई संवेदना की गुत्थियों को सुलझाने के लिए इन कवियों ने अक्षर, शब्द, शब्द की वर्तनी, वाक्य विन्यास, कोष्ठ, विराम, अर्द्ध-विराम, कोलन, बिन्दु, डाइफन, अक्षर की आकृति, कविता की आकृति, आदि सभी का मनमाना अभिनव करके अपने उद्देश्य की सिद्धि की । इन कवियों ने जिन साधनों और चतुराइयों का प्रयोग किया है उनकी महत्ता मात्र दृश्यात्मक ही नहीं है उसका श्रव्यगत तथा अर्थगत व्यंजनात्मक मूल्य भी है ।

१- फैंटेसी :

नयी कविता के कुछ प्रमुख कवियों ने अपनी उलझी हुई संवेदना की अभिव्यक्ति देने के लिए ज्ञानगर्भ फैंटेसी का सहारा लिया । 'कवि या कलाकार' ज्ञान-गर्भ फैंटेसी द्वारा सार रूप में जीवन की पुनर्रचना करता है । [२५७] फैंटेसी कवि की उलझनों एवं (परिणाम) को घुमावदार मेहराबी सौन्दर्य से युक्त एक गजब की बांकी अदा है । कवि का उद्देश्य मूल रूप में फैंटेसी रचना नहीं वरन् 'फैंटेसी' के माध्यम से यथार्थ जीवन की निगूढ़ अन्तर्धाराओं का प्रतीकात्मक ढंग से प्रक्षेपण करना है । 'फैंटेसी' के अन्तर्गत भाव पक्ष प्रधान और विभाव पक्ष गौण और प्रच्छन्न तो होता ही है, साथ ही साथ यह भाव पक्ष कल्पना को उत्तेजित करके, बिम्बों की रचना करते हुए एक ऐसा मूर्त विधान उपस्थित करता है कि जिस विधान में उस विधान के ही नियम होते हैं । [२५८] फैंटेसी में बिम्बों की संश्लिष्टात्मकता के साथ प्रतीकों का सौन्दर्य भी विद्यमान रहता है । फैंटेसी में यथार्थ जीवन की छाया घुमावदार शब्दावली में होती है इसीलिए मुक्तिबोध ने कहा कि 'फैंटेसी' में प्रतिच्छायित जीवन तथ्य फैंटेसी के अपने फ्रेम के अंग ही हों, यह आवश्यक नहीं है । आवश्यक इतना ही है कि फैंटेसी के रंग, जीवन तथ्यों के रंग से मिलते जुलते हों अथवा उन तथ्यों

के रंग से अनुस्यूत हों।[२५६] इस प्रकार फैंटेसी अन्तर्मन की छटपटाहट, बाह्य दबावों से उत्पन्न कडुवाहट, हृदय में रिस रहे ज्ञान के तनाव की अभिव्यक्ति है।[२६०] मुक्ति बोध की अनेक कविताओं में इस प्रकार कथन के घुमावदार प्रयोग हुए हैं ---

स्वप्न के भीतर एक स्वप्न
विचारधारा के भीतर और
एक अन्य
सघन विचार धारा प्रच्छन्न !!
कथ्य के भीतर एक अनुरोधी
विरुद्ध विपरीत
नेपथ्य संगीत !!
मस्तिष्क के भीतर एक मस्तिष्क
उसके भी अन्दर एक और कक्ष
कक्ष के भीतर
एक गुप्त प्रकोष्ठ और
कोठे के साँवले गुहान्धकार में
मजबूत - - - - - - सन्दूक
दृढ़ भारी- भरकम
और उस सन्दूक के भीतर कोई बन्द है
यक्ष
या कि ओरांग-उटांग हाय ।[२६१]

उपर्युक्त कविता में कवि ने फैंटेसी के माध्यम से अपने अन्तर्मन की

छटपटाहट एवं त्रासद मानसिक जटिलता की उस स्थिति की ओर संकेत कराया है जहां व्यक्ति की चेतना में अनेक पर्तों के भीतर आन्तरिक एकालाप, गंलाप चलता रहता है और संकल्प-विकल्प की अनेक विरोधी धारायें मन को कचोटती रहती हैं। फैंटेसी के माध्यम से यथार्थ जीवन के रहस्य को अजीबोगरीब ढंग से मुक्ति बोध ने अभिव्यक्त किया है —

काठ के पैर
ठूंठे-सा बना
गांठ-सा कठिन गोल चेहरा
लम्बी उदास लकड़ी डाल से हाथ चीण
वह हाथ फैला लम्बायमान,
दूरस्थ हथेली पर अजीब
घोंसला
पेड़ में एक मानवी रूप
मानवी रूप में एक ठूंठ
सच या कि झूठ ?
घोंसला उलझकर बदहवास,
बेबस उदास
क्यों लटक रहा झूलकर।[२६२]

निश्चय ही फैंटेसी कथ्य की गहराई और व्यापकता को बढ़ाने में सहायक हुई है। रहस्य के भीतर एक रहस्य ठूंसा हुआ है। फैंटेसी का प्रयोग मुक्तिबोध के 'ओरांग ओटांग' ब्रह्मराक्षस, 'चांद का मुंह टेढ़ा है' तथा अंधेरे में आदि कविताओं में हुआ है।

२–उलटवांसी :

नाथ सम्प्रदाय के सिद्धों एवं कवियों तथा कबीर ने भी उलटवांसी का प्रयोग किया । नयी कविता के धूमिल, जगूड़ी, राजकमल चौधरी तथा राजकुमार कुंभज ने कथन की उलटी भंगिमाओं का प्रयोग किया है । 'राजकुमार कुम्भज ने उसने कहा, और बच्चा बेचैन है नामक कविताओं की यदि कोई विशेषता है तो यह कि कवि ने कथ्य को 'उलटवांसी' या दृष्टि कूट की सी शैली में ढालने की नाकाम कोशिश की है ।[२६३] धूमिल ने उलटवासी का प्रयोग सामाजिक एवं राजनैतिक विसंगतियों को उभारने के लिए किया है —

इस वक्त जबकि कान नहीं सुनते हैं कविताएं
कविता पेट से सुनी जा रही है,
आदमी गजल नहीं गा रहा है
गजल आदमी को गा रही है ।[२६४]

गरीबी घर की अदनी लाचारी को भी धूमिल उलटवांसी के माध्यम से अभिव्यक्ति देने में सफल हुए हैं —

रसोई घर में खुशबूदार मसालों और उबलती हुई।मुसकुराहटों का जहर।किस तरह उसकी हत्या करता है।किस तरह रिश्ते उसे दावत की तरह खाते हैं ।[२६५]

३- शब्द विच्छेदन, शब्द खण्डों के मध्य अन्तराल का आयोजन एवं शब्दों का सही बटा प्रयोग :

नयी कविता का कवि अपनी उलझी हुई संवेदना की अभिव्यक्ति के लिए वक्रता के इन नये तौर तरीकों का सहारा लेता है कभी वह शब्द विच्छेद

द्वारा तो कभी वह शब्दों के मध्य अन्तराल रखते हुए वैचित्र्य की सृष्टि करना चाहता है । नयी कविता के कवियों ने कभी- कभी शब्द विच्छेदन करके एक ही शब्द को दो स्थानों पर रख दिया है, और कभी- कभीवह एक ही शब्द का विच्छेदन करके तीन या चार पंक्तियों में रख देता है और कभी- कभी आगे वाले शब्द के खण्ड को उसके आगे वाले शब्द खण्ड के साथ जोड़ देता है । इस प्रकार का वैचित्र्य प्रयोग सक्लदीप सिंह, श्याम परमार और गंगाप्रसाद मिश्र मोहन की कविताओं में हुआ है ——

छोटी बड़ी, बड़ी छोटी
लम्बी,टेढ़ी आमने-सामने
विपरीत समानान्तर
लाइनों की पूंछ में
फंसी हुई लाइने
लाइनें - - - -
ला
इ
नें[२६६]

क्या होगा कहने से
लिख डाला खरा
कविता के नीचे से
खींच लिया ताला
आबाबील आला ।
आला
आ ला
आ ——[२६७]

उपर्युक्त कविता में अन्तिम तीन पंक्तियों में एक ही शब्द लाइनें का तीन लाइनों में विच्छेदन हुआ है । इसी प्रकार गंगामिश्र मोहन ने भी इसी शब्द वैचित्र्य को अपनाया है ——

'लुकमान अली गीता और कोकशास्त्र दोनों की कसम खाकर दर्शक दीर्घा में बैठता है । वह सुपारी नहीं है कि आप उसका कोई उपयोग कर सकें ।

वह मात्र गवाह होकर
विधायकों की गाली-गलौज
छु ना

टोपियों का उ   ल
और छेद- छेद की आवाजों
के बीच अपने पाजामे उतारता है ।[२६८]

उपर्युक्त पंक्तियों में विधायकों की गाली- गलौज से आगे जाने पर `कनाल` शब्द सामने आता है और उसके भी आगे जाने पर वहीं `कनाल` शब्द `उछलना` में बदल जाता है यही नहीं प्रस्तुत पंक्तियों में वर्णों को उसी प्रकार उछाला गया है जिस प्रकार टोपी के उछालने पर पहले वह ऊपर जाती है और फिर उछलते हुए नीचे आती है उ छ ल ना ।

कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह ने भी इस प्रकार के शब्द वैचित्र्य का प्रयोग किया है —

मां,	तुम्हारी
आदमी का जन्म	उठी
कि	हुई
त	भौंहों
ना	के
अ	ह
ल	र
ग	से[२७०]
है[२६९]	

संवेदनाओं की जटिलता से आक्रान्त नयी कविता के इन कवियों ने सही बटें के रूप में शब्द वैचित्र्य प्रयोग किए । कवि जब अनिश्चय की स्थिति में होता है तो वह इस प्रकार की गणितीय प्रणाली अपनाता है ——

सब्र अभी ० ० ० ० और सब्र ० ० ० ०
जीवन को बहने दो
किसी एक निर्णय तक
लहरों को बनने दो :
कौरव से उगलने दो
लहरों की गुत्थियां
निरूद्देश्य भंवरों में
नचने
फंसने दो यहां वहां ।[२७१]

उपर्युक्त पंक्तियों में 'नचने' और 'फंसने' सही कटे के रूप में प्रयुक्त करने के साथ कवि का अन्त: संघर्ष अभिव्यक्त हुआ है कवि अन्तिम क्षण में यह निश्चित नहीं कर पाता कि जीवन को नचने दिया जाय या फंसने दिया जाय। कवि ने नाचने के बजाय लघु रूप नचने प्रयुक्त किया है, नाचने में व्यक्ति की स्वतन्त्र इच्छा होती है और नचने में मजबूरी और बाह्य दबाव ध्वनित होता है । इस प्रकार का शब्द वैचित्र्य राजेन्द्र किशोर और राजा दुबे की कविताओं में भी मिलता है —

मैंने
देखा
पेड़
चांद का[२७७]
सांझ :एक जिद्दी लड़की की तरह
क
क म रे
रे
में घुसी[२७३]

४- शब्दों का लघ्वीकरण :

नयी कविता का कवि अपनी उलझी हुई संवेदना की अभिव्यक्ति के लिए शब्दों को छोटे से छोटे रूप में प्रयुक्त करता है उदाहरण के तौर पर सौमित्र मोहन की कविता द्रष्टव्य है —

आन्दोलन	आन्दोल	आन्दो	आन्	आ आ T
आन्दोलन	आन्दोल	आन्दो	आन्	आ आ T
आन्दोलन	आन्दोल	आन्दो	आन्	आ आ T
आन्दोलन	आन्दोल	आन्दो	आन्	आ आ T
आन्दोलन	आन्दोल	आन्दो	आन्	आ आ T
आन्दोलन	आन्दोल	आन्दो	आन्	आ आ T
आन्दोलन	आन्दोल	आन्दो	आन्	आ आ T
आन्दोलन	आन्दोल	आन्दो	आन्	आ आ T
आन्दोलन	आन्दोल	आन्दो	आन्	आ आ T
महाम्
महाम्
महाम्
महा
मह्
म
T[२७४]

प्रस्तुत कविता में कवि ने शब्द वैचित्र्य के द्वारा प्रजातन्त्र के प्रति अपनी ज्ञानात्मक संवेदना का प्रस्तुतीकरण किया है। प्रजातंत्र व्यक्ति को किन परिस्थितियों में ले जाकर खड़ा कर देता है उसकी व्यंजना प्रस्तुत कविता में शब्दों के लघ्वीकरण

के साथ हुई है । प्रजातन्त्र की मुख्य विशेषता आन्दोलन है जो अन्तिम समय में 'धड़ाम' तोड़ फोड़ की स्थिति में बदल जाता है । धड़ाम शब्द आन्दोलन की चरम सीमा है और आगे चलकर आन्दोलन विराम की सीमा पर पहुंच जाता है, तोड़-फोड़ रुक जाती है । इस पूरी प्रक्रिया को कवि ने विशिष्ट तकनीक के माध्यम से प्रस्तुत किया है । सौमित्र मोहन की कविता घर बार में भी इसी शब्द वैचित्र्य का साक्षात्कार होता है —

घरबार ० घरबार ० घरबार ० घरबार ० घरबार ०घरबार० घरबार०
० ०
घर घर
० ०
बार बार
० ०
घर घर
० ०
बार ० बार
० घरबार ०
घर घर
० ०
बार बार
० ०
घर घर
० ०
घरबार ० घरबार ० घरबार ० घरबार ० घरबार ० घरबार[२७५]

उपर्युक्त कविता में कवि अपने संघर्षमय जीवन से तथा पारिवारिक घुटन से त्रस्त आकर जब अभिव्यक्ति का कोई साधन नजर नहीं आया तब चौंखटा घरबार

बनाकर स्वयं को चहरदीवारी के अन्दर कैद कर लिया ।

इसी तरह चन्द्रकान्त देवताले ने नफरत शब्द को लेकर वैचित्र्य का एक अनोखा रूप नई टेकनीक के साथ प्रस्तुत किया है —

नफरत
न नदी का है या नक्कू का
फ फल का है या फफूंद का
र रस का है या रण्डी का
त तराजू का है या तलवार का
नफरत शब्द को कैसे उठायेंगे
किश्तों में या एक साथ
सीधे नदी, फल, रस और तराजू
या
नक्कू फफूंद ~~एक~~ रण्डी तलवार को मिलाते हुए
अथवा तिरछी पद्धति से
नदी को फफूंद और नक्कू को फल
या फल रण्डी के पास
अथवा रण्डी तराजू में बिठायेंगे
या ~~मम~~ फफूंद को रस में डुबाकर
तलवार से चलायेंगे
आप ही बतायें
वक्त की परिभाषा के लिए
नफरत शब्द को कैसे उठायेंगे - - - - - - -[२७६]

प्रस्तुत कविता के माध्यम से कवि का अभिप्राय यह है कि अभिव्यक्ति के इस संकट में सच्ची भाषा नहीं मिली तो व्यक्ति सत्य को समष्टि सत्य कैसे बना सकेगा ।

Lo1b2..

५- आवृत्ति, पैरेन्थीसिस, हाइफन, कामा एवं विराम चिन्हों से उत्पन्न वक्रता :

नयी कविता के कवियों ने एक ही शब्द, शब्द समूह या वाक्यांश की अनेकों बार आवृत्ति कर वक्रता की सृष्टि की है -- धर्मवीर भारती, अज्ञेय, भारत भूषण अग्रवाल ने इसका समुचित प्रयोग किया है ——

कुछ नहीं रहा है कहने को ।
कुछ नहीं रहा है कहने को
कुछ नहीं रहा है कहने को
कुछ लक्ष्य नहीं जिस पर मैं प्रत्यंचा खींचूं
अब कोई गहरा दर्द नहीं है सहने को ।[२७७]

वह भी है जो प्रत्येक क्षण प्रलय की ओर बढ़ता जाता है
वह भी है जो चिर विध्वंस में एक मंगल-सूत्र सा अक्षम है
वह भी है जिसके आभा मंडल में असंख्य और मंडल हैं
वह भी है जिसके अस्तित्व से बंधा धूमकेतु अमंगल है
वह भी है जो विघटन, विपर्यय, विसर्जन, लांछन व्यंग्य,-अपवाद
वह भी है जो संगठन, सक्षम, सम्बोधन, संवरण-आल्हाद----[२७८]

केदारनाथ सिंह की कविता टूटने दो[२७९] और शामें बेंच दी है[२८०] में 'को, और, शाम की आवृत्ति हुई है ।

नयी कविता के कवियों ने भाषा में वैचित्र्य उत्पन्न करने के लिए पैरेन्थिसिस, हाइफन, कामा, एवं विराम संकेतों का सहारा लिया । छोटी-बड़ी पंक्तियाँ तथा केवल एक शब्द की पंक्तियों का प्रयोग, रामविलास शर्मा तथा गिरिजाकुमार माथुर को छोड़कर सभी कवियों ने लिया । स्वर सामंजस्य की

रक्षा हेतु अज्ञेय ने संस्कृत की पूर्व रूप संधि का प्रयोग किया जैसे निविड़ांधकार, आह्वान इत्यादि। आज की कविता में पैरेन्थिसिस तो साधारण बात हो गयी है - अज्ञेय, शमशेर, प्रयागनारायण त्रिपाठी, धर्मवीर भारती, लक्ष्मीकांत वर्मा, विनय की कविताओं में इस प्रकार के प्रयोग देखे जा सकते हैं —

मगर बैठिये
मेरी पसली में है --- गिन लो
व्यंजन : और उनके बीच में है
स्वर
(उसे मेरा ही कहो — फिलहाल :
अहा, तुम कितने अच्छे हो कि मूर्ख हो
—महात्मा मूर्ख
—इस जमाने के स्वांग में उतरे हुए
—एक आदिम तम देवता : स्थिर तुम।[८१]

परिचय खूब :
पर अभी है और भी :
जैसे कि कायरता —
(कि आत्मा की अटल जो मांग,
तुम बस खोजती रहती
उसी से भागने की राह)-[८२]

डा० विनय ने भी इस प्रकार के प्रयोग को बढ़ावा देकर वैचित्र्य की सृष्टि की है —

कब तक गुजारा करूंगा - - - - - - -
यह क्या हुआ - - - - - -
मुझे ——
तुम्हें ——कि[८३]

सौमित्र मोहन और कुमार विकल की कविताओं में इसका अपना अलग ही वैचित्र्य है-

फर्शें
खिड़कियां
दरवाजे
: शून्य की इकाइयों का जमघट—एक बड़ा शून्य।
दुनिया की नासमझी है : कि मैं हूं
और मेरी नासमझी है : कि मैं नहीं हूं।
मैं एक नियति-भ्रम हूं ; और इस बौने की स्थिति को
जी रहा हूं
और बस जी रहा हूं।[२८४]

कुमार विकल की कविताओं से लगता है कि वे घुटन और संत्रास की स्थिति में दो पाटों के बीच पिस रहे हैं और अलीबाबा की तरह सिम-सिम भूलकर अपने ही नाम का चीत्कार कर रहे हैं :-

मैं गिनती करने लगता हूं ——
० ० ० ० ० ० एक शहर में दो कारखाने हों
तो दो में चार
पांच में दस
दस में बीस
बीस में चालीस और
० ० ० ० ० ० और स्मृतियों के दालानों में
भटकती हुई एक आवाज आती है ——
अलीबाबा ० ० ० ० ० ० ० ० ० ० अलीबाबा[२८५]

६- गणितीय, ज्यामितीय उपकरणों एवं प्रश्न चिन्हों द्वारा उत्पन्न वक्रता :

नयी कविता के कवियों के सामने एक बहुत बड़ी समस्या थी वह थी- उलझी हुई संवेदना की अभिव्यक्ति, इसके लिए इन कवियों ने "भाषा को अपर्याप्त पाकर विराम संकेतों से और अंकों से सीधी और तिरछी लकीरों से, छोटे-बड़े टाइप से, सीधे या उल्टे अक्षरों से लोगों और स्थानों के नामों से, अधूरे वाक्यों से, सभी प्रकार के इतर साधनों से कवि उद्योग करने लगा कि अपनी उलझी संवेदना को पाठकों तक पहुंचा सके ।[२८६] उलझे और कुण्ठित विचारों को कोष्ठकों रेखा चित्रों, धन-ऋण चिन्हों, त्रिकोण, त्रिभुज वर्गमूल, तथा ह्रस्व दीर्घ चिन्हों द्वारा सुलझाने का प्रयास किया ।

भाषागत वैचित्र्य निखारने के लिए इन कवियों ने कोष्ठकों का प्रयोग किया है । इन कवियों ने गणित की तरह बड़े और मंझले कोष्ठकों का प्रयोग न करके मात्र लघु कोष्ठकों का ही प्रयोग किया है । इन कवियों के लिए खास तौर से यह आवश्यक नहीं है कि गणित के सभी नियमों का पूरी तरह पालन करें। कोष्ठकों का प्रयोग वह इस ढंग से करता है कि कभी पूरी पंक्ति अन्दर आ जाती है और कभी- कभी किसी एक शब्द को व्यंजकता प्रदान करने के लिए ब्रेकेट्स की कोठरी, बंद छोड़ देता है —

(क) (हमारा अंतर
एक बहुत बड़ी विजय का
आलोक चिन्ह
हो ।[२८७]

(ख) बंजर पातों से गिरता हुआ दर्द
एक है ?
(- नहीं ।)[२८८]

धूमिल की कविताओं में लघु कोष्ठकों के साथ-साथ फफले कोष्ठकों का भी जितना सही और सुगत प्रयोग मिलता है उतना अन्यत्र कहीं नहीं —

हत्यारा ! हत्यारा ! ! हत्यारा ! ! !
(मुझे - ठीक-ठीक याद नहीं है
मैंने यह किसको कहा था ।
शायद अपने आपको
शायद उस कम शक्ल को (जिसने
खुद को हिंदुस्तान कहा था) शायद
उस दलाल को
मगर मुझे ठीक-ठीक याद नहीं है) [२८६]

सौमित्र मोहन ने त्रिकोन एवं त्रिभुज द्वारा भाषा को दुहरी व्यंजना का साधन बनाया है —

'शुतुर्मुर्ग चाहे जहाँ भी पाया जाता हो लेकिन लुकमान अली भारत में ही मिलता है । बाजार का वह कोना जहाँ औरतें गर्भ में दो या तीन बच्चे भरकर लाल त्रिकोन की तरफ इशारा करती हैं ।' [२९०]

बलदेव प्रसाद मिश्र ने त्रिकोण, त्रिभुज, प्रश्न चिन्हों, तथा आड़ी तिरछी रेखाओं का प्रयोग करके वक्रता की नई सृष्टि की है —

------ ---------

हाय

नहीं चैन
जागते ही कट गयी रैन

---- ---- ---

प्रेम यानी इश्क यानी लव

(I)

(II)

?

अरमानों के गाल पर चांटा

फरबेरी का कांटा

------? -----

मुहब्बत में घाटा ।[२९१]

उपर्युक्त कविता में एक ही दिशा की ओर उन्मुख दो तीर प्रेमी और प्रेमिका के एक ही भाव को व्यंजित करते हैं। बाह्य रेखा और द्वारा, अन्दर त्रिभुज द्वारा प्रेमी और प्रेमिका के अन्तर्बाह्य घुटन एवं मानसिकता की कचोट को अभिव्यंजित किया गया है। दोनों को बाहर और भीतर कहीं चैन नहीं है, दोनों बंद कमरे में घुट रहे हैं। जागते ही कट गयी रैन, दोनों ही एक दूसरे के विषय में सोचते-सोचते सारी रात जाग-जाग कर काट देते हैं। वे हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई किसी धर्म में जाकर लव मैरेज करना चाहते हैं - प्रेम यानी इश्क यानी लव प्रेम से हिन्दू, इश्क से मुस्लिम और लव से ईसाई शब्द की प्रतीति यहां प्रतीकात्मक एवं लक्षणा के माध्यम से ध्वनित हो रही है। परन्तु उनके इन लम्बे अरमानों के आगे फरबेर का कांटा और प्रश्न चिन्ह लगा हुआ है। प्रेमी और प्रेमिका के गहरे अरमानों के गाल पर करारा चांटा जड़ा गया है। परन्तु प्रेम की पीर दोनों के हृदय में फरबेरी के कांटे की तरह सालती है। इसीलिए प्रश्न चिन्ह को न तोड़ सकने के कारण प्रेमी, प्रेमिका अपने मुंह घुमा लेते हैं और बार-बार यही सोचते हैं कि मुहब्बत में घाटा ही घाटा मिला, बड़ी हानि हुई। ईश्वर चन्दर ने 'निगेटिव' और 'पाजिटिव' से स्वीकार +, अस्वीकार - के बीच में लज्जा मिश्रित नकार स्वीकार है --

अंधेरी रात।फोटोग्राफर का डार्क रूम है जहाँ से हर निगेटिव
सुबह होते- होते
पाजिटिव होकर निकलता है।[२९२]

श्री रमण ने + चिन्हों के माध्यम से इसी वैचित्र्य का उदाहरण प्रस्तुत किया है -

ए + क   एक
एक + वियोग   कवि
एक + वियोग + तीन   कविता[२९३]

इस प्रकार नयी कविता के कवियों ने समस्त गणितीय एवं ज्यामितीय उपकरणों का सहारा लिया है। ` मैं कलिया `, की इसी प्रकार की एक कविता --

अपनी शादी
(शादी के बारे में)
स्थिति है
मेरी

(तुम्हारे बाप (तुम्हारी माँ(तुम-)तुम्हारे पड़ोसी)
तुम्हारा खानदान)

मैं तुम = स्वर्ग
असम्भव है
सम्भव है मैं-- तुम = (तुम्हारे घर के नीचे)

मैं आऊँ
सीटी बजाऊँ।[२९४]

उपर्युक्त कविता में शादी के लिए उत्सुक प्रेमी और चूंकि , और इसलिए से घिर जाते हैं। प्रेमी और प्रेमिका दोनों शादी करना चाहते हैं परन्तु

Lalpcma's

लड़की के माँ, बाप, पड़ोसी, खानदान, नहीं चाहते । मैं तुम = स्वर्ग से यह तात्पर्य निकलता है कि दोनों का प्रेम स्वर्ग के तुल्य है अर्थात् दोनों राजी हैं । प्रेमी कहता है जो सम्भव है वही कहता हूँ, मैं तुम्हारे घर के नीचे आऊँ सीटी बजाऊँ । इस प्रकार नयी कविता कवियों के वैचित्र्य के अनोखे प्रयोग किये हैं । कभी- कभी कविता के अनुरूप चित्र बनाते हैं और चित्र के अनुरूप कविता । कहीं वर्णों के विन्यास में वक्रता का सुन्दर रूप प्रस्फुटित होता है और कहीं- कहीं शब्दों पंक्तियों और सम्पूर्ण वाक्यों में भाषा का यह वैचित्र्य आकर्षक लगता है, कहीं अनेक वक्रता प्रकार नयी कविता की इस छिछली घाटी में वग पंक्तियों की तरह आ जाते हैं ।

---

kalpana's

सन्दर्भ-सूची

१- अरणिस्थं यथा ज्योतिः प्रकाशान्तर कारणम् ।
तद्वच्छब्दो पि बुद्धिस्थः श्रुतीनाम् कारणं पृथक् ।।
भर्तृहरि वाक्य प्रदीप- १ :४६

२- नित्यः शब्दार्थ सम्बन्धः वही १:२३

३- गौ मित्यमि सम्बन्धो बुद्ध्या प्रक्रमते यदा ।
वाक्यार्थस्य तदैको पि वर्णः प्रत्यायको भवेत ।।
वही ११:४०

४- भामह : काव्यालंकार : द्वितीय परिच्छेद ।

५- सन्निवेश विशेषात्तु दुरुक्तमपि शोभते ।
नीलं पलाशमाबद्धमन्तराले स्रजामिव ।।
किञ्चिदाश्रय सौन्दर्यात् धत्ते शोभा मसाध्वपि ।
कांता विलोचन न्यस्तं मलीमसमिवांजनम् ।।
- भामह : काव्यालंकार- १:५४,५५,पृष्ठ-२६

६- अब यहां कोई अर्थ खोजना व्यर्थ है
पेशेवर भाषा के तस्कर संकेतों
और बैल मुखी इबारतों में
अर्थ खोजना व्यर्थ है,
- धूमिल : संसद से सड़क तक

७- भाषा अब वेश्या है। सबकी बाहों में समायी हुई सबके होठों पर
बसी हुई। उसके विवस्त्र अंगों में अब कोई अर्थ नहीं ।
कविता ६, संपादक-भगीरथ भार्गव, जयसिंह नीरज

८- मैं शब्दकोषों में जा रहा हूं लगाने आग
याद रखना अपना नाम

जानी-पहचानी भोगी संज्ञाएं
ताकि नये शब्द कोष में न रह सकें
षडयंत्रों के सूत्र पर्याय धोखा देने के लिए
'ज्ञानोदय', दिसंबर १९६८, आनन्दप्रकाश दीक्षित, पृ० २७ से उद्धृत ।

९- पन्त, पल्लव की भूमिका, पृष्ठ-२८-२९
१०- वही, पृष्ठ-१५
११- पदानां स्मारकत्वे पि पद मात्राव भासित: ।
तेन ध्वने: प्रभेदेषु सर्वेष्वेवास्ति रम्यता ।।
विच्छित्ति शोभिनैकेन भूषणेनैव कामिनी ।
पद द्योत्येन सुकवेर्ध्वनिना भाति भारती ।।
- ध्वन्यालोक हिन्दी टीका, रामसागर त्रिपाठी, पृष्ठ-९९३

१२- सो र्थस्तद् व्यक्ति सामर्थ्य योगी शब्दश्च कश्चन ।
यत्नत: प्रत्यभिज्ञेयौ तौ शब्दार्थौ महाकवे : ।।
ध्वन्यालोक : १:८
१३- सर्वेश्वर, कुआनोनदी, पृष्ठ-६०
१४- विद्यानिवास मिश्र, रीति विज्ञान, पृष्ठ-६१
१५- काव्यस्यात्मा स एवार्थस्तथा चादि कवे: पुरा ।
क्रौंच द्वन्द वियोगोत्थ: शोक: श्लोकत्वमागत: ।।
मा निषाद, प्रतिष्ठां त्वमगम: शाश्वती समा: ।
यत्क्रौंच मिथुनादेकमवधी काममोहितम् ।।
- ध्वन्यालोक, १:४, पृष्ठ-७६
१६- ध्वन्यालोक, १:६, ३:३८
१७- वह भाषा छिपती छवि सुन्दर
कुछ खुलती आभा में रंग कर
वह भाव कुरल कुहरे सा भरकर आया
- निराला- तुलसीदास, पृ०१३, बारहवां सं० भारती भण्डार, इलाहाबाद ।

१८- संकेत कर रही रोमाली चुपचाप बरजती खड़ी रही ।
भाषा बन भौंहों की काली रेखा सी भ्रम में पड़ी रही ।।
- प्रसाद, कामायनी, लज्जा सर्ग, पृ० ४३, प्र०प्रकाशन, वि०सं० १९८०

१९- अज्ञेय, आत्मनेपद, पृष्ठ-११-१२

२०- हरी घास पर क्षण भर, पृष्ठ-३४

२१- एफ०ओ०मैथिसन : द अचीवमेन्ट आफ टी०एस०इलियट, पृ०८१-८२

२२- टी० एस० इलियट : द यूज आफ पोयट्री एण्ड द यूज आफ क्रिटिसिज्म, पृष्ठ-११८-११९

२३- अज्ञेय : आंगन के पार द्वार, पृष्ठ-७२

२४- नेमिचन्द्र जैन, तारसप्तक व्यर्थ, पृष्ठ-२७

२५- भारत भूषण अग्रवाल, तारसप्तक फूटा प्रभात, पृ० १०१

२६- गिरिजाकुमार माथुर, तारसप्तक रेडियम की छाया, पृ० १३०

२७- डा० जगदीश गुप्त, शब्द दंश, पृष्ठ-३५

२८- सो र्थस्तद् व्यक्ति सामर्थ्य योगी शब्दश्च कश्चन ।
यत्नतः प्रत्यभिज्ञेयौ तौ शब्दार्थौ महाकवे : ।।
- रामसागर त्रिपाठी, ध्वन्यालोक १:८ हिन्दी टीका

२९- काव्यस्यात्मा स एवार्थस्तथा चादिकवेः पुरा ।
क्रौंच द्वन्द वियोगोत्थः शोकः श्लोकत्व मागतः ।।
मा निषाद प्रतिष्ठांत्वमागमः शाश्वती समा : ।
यत्क्रौंच मिथुनादेकमवधीः काम मोहितम् ।।
- ध्वन्यालोक-१:४ हिन्दी टीका, रामसागर त्रिपाठी, पृ०७६

३०- संवेदनाख्यया व्यंग्यस्पर - संविद्वि गोचरः
पूर्ण स्फुरणात्मा सतत्व प्रसाद प्रणवादि विमर्श रूपं संवेदनम् ।
-क्षेमराज-शिवसूत्र विमर्शिनी

Kalpana's

३१- विलियम वैन ओ 'कानर, 'सैन्स एण्ड सैन्सिबिलिटी इन माडर्न पोयट्री, पृष्ठ-१४३

३२- टिलियर्ड का वक्रोक्ति सिद्धान्त, डा० मथुरेशनंदन कुलश्रेष्ठ, पृ० २५

३३- छायावादी काव्यभाषा का विवेचनात्मक अनुशीलन, नगेन्द्र ठाकुर, पृ० २४

३४- सुरेन्द्र तिवारी, 'आठवें दशक की शाम, पृष्ठ-१८

३५- रघुवीर सहाय, आत्महत्या के विरुद्ध, पृ० ४३

३६- रघुवीर सहाय, वही- पृ० १३

३७- सर्वेश्वर बांस का पुल, पृष्ठ-७२

३८- वही- पृष्ठ-७४

३९- श्री राम वर्मा, नयी कविता अंक-४ पृष्ठ-१११

४०- हिन्दी साहित्य कोश, भाग-१, रामखेलावन पांडे, पृ० ७४१

४१- नालंदा : विशाल शब्द सागर, पृष्ठ-१३०८

४२- यत्रार्थः शब्दो व तमर्थमुपसर्जनी कृत स्वार्थौ ।
व्यक्तः काव्य विशेषः स ध्वनिरिति सूरिभिः कथितः ।।
-ध्वन्यालोक : १:३

४३- इदमुत्तमम तिशयिनि व्यंग्ये वाच्याद् ध्वनिर्बुधैः कथितः ।
-मम्मट : काव्य प्रकाश १:४, चौखम्भा सिरीज ।

४४- प्रतीयमानं पुनरन्यदेव वस्त्वस्ति वाणीषु महाकविनाम् ।
यत्तत्प्रसिद्धावयवातिरिक्तं विभाति लावण्य मिवांगनासु ।।
- ध्वन्यालोक :१:४, पृष्ठ-७६ हिन्दी व्याख्याकार, रामसागर त्रिपाठी, प्र०सं० १९६३, मो०ब० वाराणसी ।

४५- वही- १:६

४६- वही :१:३८

४७- कामिनी कुच कलशवद् गूढं चमत्करोति ।
मम्मटः काव्यप्रकाश ५:४५ पृष्ठ-१२४ चौखम्भा

४८- वीरेन्द्र मिश्र, गौतम, पृष्ठ-८४

kalpana's

४६- शंभूनाथ सिंह, माध्यम मैं, पृष्ठ-७५

५०- जगदीश गुप्त, शब्द दंश, पृष्ठ-३५

५१- प्रभाकर माचवे, अनुक्षण, पृष्ठ-४६

५२- कृष्णाचन्द्र, प्रतीक, अप्रैल मई १९५१

५३- जगदीश गुप्त, शब्ददंश, पृष्ठ-५४

५४- विद्यानिवास मिश्र, रीति विज्ञान, पृष्ठ-३५

५५- मुख्यतया प्रकाश मानो व्यग्यो थीः ध्वनेरात्मा ।
- ध्वन्यालोक, पृष्ठ-३५५

५६- ध्वन्यालोक- हिन्दी टीका, रामसागर त्रिपाठी, पृष्ठ-३५५

५७- इयं वाच्ये क्वचित् प्रतीयमानार्थनिध्या रोपेणैव भवति,
क्वचिद् वाच्यारोपेणैव, क्वचिद् श्लेषच्छाया रोपेण ।
- मम्मटः काव्य प्रकाश १०:९८ वृत्ति ।

५८- शरीरीकरणं येषां वाच्यत्वेन व्यवस्थितम् ।
तेऽलंकाराः परां छायां यान्ति ध्वन्यं गतां गताः ।।
ध्वन्यालोकः २८

५९- व्यंग्यस्यालंकार वत्वे पि न्यायादलंकारत्वमुपचर्यते विश्वनाथः
साहित्यदर्पण : ४:२०४

६०- सुप तिन्ग वचन सम्बन्धैस्तथा कारक शक्तिभिः ।
कृत तद्धित समासैश्च द्योत्यो लक्ष्यक्रमः क्वचित् ।।
- ध्वन्यालोक-३:१६
च शब्दात् निपातोपसर्गं कालादिभिः प्रयुक्तैरभिव्य ज्यमानो दृश्यते ।
वही : ३:१६

६१- एवं ध्वनेः प्रभेदाः प्रभेदभेदाश्च केन शक्यन्ते संख्यातुं दिङ्मात्रं,
तेषामिदमुक्तमस्माभि :ानन्ता हि ध्वनेःप्रकाशःसहृदयानां व्युत्पत्तये
तेषां दिङ्मात्रं कथितम् । ध्वन्यालोकः ३:४ पृष्ठ १२९०

kohinoor's

६२- सर्वेष्वेव प्रभेदेषु स्फुटत्वेनावभासनम् ।
यद्व्यंगस्याङ्गिभूतस्य तत्पूर्णं ध्वनि लक्षणाम् ।।
- ध्वन्यालोक, २:३३ पृष्ठ-६५४

६३- तीसरा सप्तक, भूमिका, अज्ञेय, पृष्ठ-१२,१३,१४

६४- जगदीश गुप्त कवितान्तर का तर्क, पृष्ठ-२५

६५- नयी कविता, अंक-७, पृष्ठ-६ सं० जगदीश गुप्त

६६- निराला : जीवन और साहित्य मधुकर गंगाधर, पृष्ठ-७६

६७- केशवचन्द्र वर्मा? वीणापाणि के कम्पाउण्ड में, पृष्ठ-७०

६८- क्लर्क बोला सर ।
प्रार्थना सभा के प्रवचनों को दीमक चाट रही हैं
कहां रखूं, कहीं जगह नहीं है ?
साहब ने एक फ्रिज का आर्डर दे दिया है
- भारत भूषण अग्रवाल, पूर्णांक-३८, पृष्ठ-४०

६९- रघुवीर सहाय- हंसो-हंसो जल्दी हंसो, पृष्ठ-९

७०- बल्देव वंशी उपनगर में वापसी, पृष्ठ-६

७१- सुरेन्द्र तिवारी, धर्मयुग-१९ जुलाई, १९७०

७२- सर्वेश्वर : धर्मयुग २३ अप्रैल, ७२, पृष्ठ-१५

७३- धूमिल, आलोचना, जनवरी-मार्च १९६८ पृष्ठ-९-१०

७४- राजनीति के सारे रोंगटे। जो चुनाव की गुदगुदी से खड़े (और शायद) बड़े, । हो गये थे। वे यथावत हो गये हैं। भाषणों की बन्दूकें। घोषणाओं की तलवारें। और आश्वासनों कवच सज्जित। अभी अभी तक। जो योद्धा थे शायद तथागत हो गये हैं ।

- सरोजकुमार, नई दुनिया-इन्दौर, ११ मार्च, १९७२

७५- रघुवीर सहाय, आत्महत्या के विरुद्ध, पृष्ठ-६

७६- चुनाव प्रचार, राजेन्द्र एस० प्रदीप, साप्ताहिक हिन्दुस्तान,
११ फरवरी १९६७, पृष्ठ-१४

७७- यश: धर्मयुग, ६ अगस्त, १९७०, पृष्ठ-२३

७८- मैं असभ्य हूं क्योंकि खुले-नंगे पांवों चलता हूं,
मैं असभ्य हूं क्योंकि धूल की गोदी में पलता हूं
मैं असभ्य हूं क्योंकि चीर कर धरती धान उगाता।
मैं असभ्य हूं क्योंकि ढोल पर बहुत जोर से गाता।।
- भवानीप्रसाद मिश्र, गांधी, पंचशती, पृष्ठ-१७६-७७

७९- धूमिल: संसद से सड़क तक।

८०- भारत भूषण अग्रवाल, एक उठा हुआ हाथ, पृ० ५४

८१- डा० रमाशंकर तिवारी, प्रयोगवादी काव्यधारा, पृष्ठ-२५२

८२- लक्ष्मीकांत वर्मा, अतुकांत, पृ०-७०

८३- डा० रघुवंश, साहित्य का नया परिप्रेक्ष्य, पृ० १८८

८४- राजकमल चौधरी, मुक्ति प्रसंग, पृष्ठ-२०

८५- नामवर सिंह, कविता के नये प्रतिमान, पृष्ठ-१६६

८६- आलोचना : पूर्णांक-३८ (अप्रैल-जून १९६७) पृष्ठ-४५

८७- धूमिल: संसद से सड़क तक, पृष्ठ-६७

८८- विलियम वैन ओ, कानर-सेन्स एण्ड सैन्सिबिलिटी इन माडर्न पोयट्री,
पृष्ठ-१२८

८९- विलियम वैन ओ 'कानर' सेन्स एण्ड सैन्सिबिलिटी इन माडर्न पोयट्री,
पृष्ठ-१४३

९०- जगदीश गुप्त, नयी कविता, कवितान्त का तर्क, पृष्ठ-२५

९१- आज के औद्योगिक सभ्यता का संत्रास, सामाजिक विषमताओं के कारण टूटने की स्थितियां, आर्थिक शोषण से पीड़ित सामान्यजन दोहरेपन को जीनेवाले लोगों का बाहरी व भीतरीपन, वैचित्र्यमूलक खोखला आदर्श, भीड़ की भागमभाग आदि सभी बातें व्यंग्य को आगे बढ़ाने के लिए अनुप्रेरित कर रही हैं। पृ०२०, धर्मयुग-२१ सितम्बर १९७५ डा० विजय शुक्ल

९२- रघुवीर सहाय, हंसो हंसो जल्दी हंसो, पृष्ठ-१

९३- सर्वेश्वर, बांस का पुल, पृष्ठ-७४

९४- धूमिल : संसद से सड़क तक, पृष्ठ-१६

९५- चन्द्रकान्त देवताले, दीवारों पर खून, पृष्ठ-८२

९६- वही, पृष्ठ-४५

९७- विलियम वैन ओ, कानर, सैन्स एण्ड सैन्सिबिलिटी इन माडर्न पोयट्री, पृष्ठ-१२८

९८- बलदेव वंशी, उपनगर में वापसी, पृष्ठ-३७

९९- डा० बैजनाथ गुप्त, नयी कविता के बाद, पृष्ठ-८३
लेखक- ओमप्रकाश अवस्थी ।

१००- परेश निगोध, पृष्ठ-१२४,१२५

१०१- दुष्यन्तकुमार, साए में धूप, पृष्ठ-४३

१०२- चन्द्रकान्त देवताले, दीवारों पर खून, पृष्ठ-८६

१०३- भारत भूषण अग्रवाल, आलोचना पूर्णांक-३८,पृष्ठ-४७-४८

१०४- डा० बादाम सिंह रावत, साठोत्तरी हिन्दी कविता :
शिल्प के नये आयाम, पृष्ठ-५४

१०५- रघुवीर सहाय, आत्महत्या के विरुद्ध,पृष्ठ-७१

१०६- श्रीकांत वर्मा, जलसाघर

१०७- An angry man may send his children to bed, cut off his son with a shilling change his Politics,bring a suit,write a satire nature of Laughter,Page-1

१०८- अतो ह्यन्यतमेनापि प्रकारेण विभूषिता ।
वाणी नवत्वमायाति पूर्वार्थान्वय वत्यापि ।।
सर्वे नवा इवा भान्ति मधुमासमिव द्रुमाः।।
ध्वन्यालोक-हिन्दी व्याख्या, रामसागर त्रिपाठी,४,२,४:४
पृष्ठ-१३१०,१३२६

Kalpana's

१०६- निराला - 'कविता की भाषा तथा शब्द'
हिन्दी काव्यशास्त्र में कविता का स्वरूप विकास,
डा० पुष्पा बंसल, पृष्ठ-२४६

११०- अक्षरादि रचनेव योज्यते यत्र वस्तु रचना पुरातनी ।
नूतने स्फुरति काव्य वस्तुनि व्यक्तमेव खलु सा-न दुष्यति ।।
प्रतायन्तां वाचो निमित विविधार्थामृत रसा ।
न सादः कर्तव्यः कविभिरनवद्ये स्व विषये ।।
ध्वन्यालोक : ४।१५,४:१७,पृष्ठ-१४०० से १४०५
रामसागर त्रिपाठी ।

१११- लक्ष्मीकांत वर्मा, नयी कविता के प्रतिमान प्रगति,प्रयोग और परम्परा,
पृष्ठ-१८७

११२- For the most part the meaning of the words at first general and perhaps vague tends to become more specific.

- Louis H.Gray: Foundation of Language,Page-252.

११३- Michael Breal,Semantics,Page-11,12

११४- द्रष्टव्यः जे०बी० ग्रीन लोघ एण्ड जी०एल० किटरेज,वर्डस एण्ड दीयरवेज
इन इंग्लिश स्पीच, पृष्ठ-२६४

११५- अर्थो वाच्यश्च लक्ष्यश्च व्यंग्यश्चेति त्रिधामतः ।
विश्वनाथः साहित्य दर्पण द्वितीय परिच्छेद : २

११६- यो र्थः सहृदयश्लाघ्यः काव्यात्मेति व्यवस्थितिः ।
वाच्य प्रतीय मानाख्यौं तस्य भेदावुभौ स्मृतौ ।।
-ध्वन्यालोक : प्रथम उद्योत

११७- E.H.Sturtevant Liguistic change-Page-87-88.

११८- तीसरा सप्तक भूमिका, पृष्ठ-१२-१३,सं० अज्ञेय

११९- दूसरा सप्तक भूमिका, सं० अज्ञेय,पृष्ठ-११

१२०- अतो हि ध्वनेरुक्तप्रभेद मध्यादन्यतमेनापि प्रकारेण विभूषिता सती वाणी पुरातन कवि निबद्धार्थ संस्पर्शवत्यापि नवत्वमायाति ।
- ध्वन्यालोक-कारिका-१०६

१२१- तथा हि अविवक्षित वाच्यस्य ध्वनेः प्रकारद्वय समाश्रयणेन नवत्वम् ।
- ध्वन्यालोकः चतुर्थ उद्योत, पृष्ठ-१३१३

१२२- प्रतिभानां वाणीनां चानन्त्यं ध्वनि कृतमिति ।
वही- पृष्ठ-१३२६

१२३- अर्थशक्त्युद्भवानुरणन रूप व्यंग्यस्य कवि निबद्ध वक्तृ प्रौढोक्ति मात्र निष्पन्न शरीरत्वेन नवत्वम् । यथा व्यंग्य भेद समाश्रयेण ध्वनेः काव्यार्थानां नवत्वमुत्पद्यते तथा व्यंजक भेद समाश्रयेणापि ।
वही- पृष्ठ-१३३१

१२४- अवस्थादि विभिन्नानां वाच्यार्थानां निबन्धनम् यत् प्रदर्शितं प्राक् भूम्नैव दृश्यते, लक्ष्ये न, तच्छक्यमपोहितुम् ।
वही- वृत्ति-११२

१२५- पारसनाथ सिंह, विपदा का कवि धूमिल, आलोचना,अप्रेल-जून १९७५
पृष्ठ-१८

१२६- धूमिल : कल सुनना मुझे

१२७- धूमिल : संसद से सड़क तक, पटकथा ।

१२८- रामदरश मिश्र, पर्याय धूप, पृष्ठ-१३

१२९- धूमिल : संसद से सड़क तक, पृष्ठ-२६

१३०- वही, पृष्ठ-१२

१३१- वही, पृष्ठ-३६

१३२- वही, पृष्ठ-३८

१३३- वही, पृष्ठ-६

१३४- जगदीश गुप्त, कवितान्तर का तर्क, पृष्ठ-२१

१३५- वही- पृष्ठ-२५

१३६- धूमिल : कल सुनना मुझे,

१३७- सुप तिंग वचन सम्बन्धैस्तथा कारक शक्तिशि : ।
कृत तद्धित समासैश्च घोत्यो लक्ष्य क्रम: क्वचित् ।।
- ध्वन्यालोक ३।१६

१३८- प्रतीयमानं पुनरन्यदेव वस्त्वस्ति वाणीषु महाकवीनाम् ।
यत्तत्प्रसिद्धावयवातिरिक्तं विभाति लावण्यमिवांगनासु ।।
यत्रार्थ : शब्दो वा तमर्थमुपसर्जनी कृत स्वार्थौ ।
व्यक्त: काव्य विशेष: स ध्वनिरिति सूरिभि: कथित: ।।
आलोकार्थी यथा दीप शिखायां ----
मुख्या महा कवि गिरामलंकृति भृतामपि ।
प्रतीयमानच्छायैषा भूषा लज्जैव योषिताम् ।।
- ध्वन्यालोक : १:४,१:१३,१:६,३:३८

१३९- काव्यस्य वक्रोक्तिरेव,वक्रोक्ति:प्रसिद्धाभिधान व्यतिरेकिणी
विचित्रैवाभिधा, विचित्रैव अभिधा वक्रोक्तिरुच्यते ।
-कुंतक-हिन्दी वक्रोक्ति जीवित, पृष्ठ-५१,सं० डा० नगेन्द्र

१४०- The terms direct and oblique are a false contrast. All Poetry is more or less oblique,there is no direct poetry,But the terms less oblique'and more 'oblique' Would sound ridiculous and the only way to be emphatic or even generally intelligible is by exaggeration to force a hypothetical and more convinient contrast.
Teliyard :Poetry :Direct and Oblique,Page-10

१४१- एलेक्जेन्डर बैन, इमोशंस एण्ड एक्सिसस, पेज-१६०

१४२- मेरिडिथ : द आइडिया आफ कामेडी, पेज-७६

१४३- प्रो० जगदीश पांडेय, हास्य के सिद्धान्त तथा मानस में हास्य ।

१४४- वक्राभिधेय शब्दोक्तिरिष्टा वाचामलंकृति : काव्यालंकार १।६
वाचां वक्रार्थ शब्दोक्तिरलंकाराय कल्पते ।
वही: ५:६६

१४५- निमित्ततो वचो यत्तु लोकातिक्रान्त गोचरम् ।
मन्यन्ते तिशयोक्तिं तामलंकारतया यथा ।। वही २।८१

१४६- एवं चातिशयोक्तिरिति वक्रोक्तिरिति पर्याय इति बोध्यम्।
- मम्मट : काव्य प्रकाश-बाल बोधिनी टीका, पृष्ठ-६०६

१४७- लोकोत्तर चमत्कार कारि वैचित्र्य सिद्धये ।
काव्यस्यायमलंकार: को प्यपूर्वो विधीयते ।।
वक्रोक्ति जीवित-१:२

१४८- विदग्ध भणिति भंगि निवध वस्तुनो रूपं नियतस्वाभावम् ।
राजशेखर, काव्यमीमांसा, पृष्ठ-११४

१४९- प्रसिद्धाभिधान व्यतिरेकिणी विचित्र एव अभिधा ।
कुंतक-वक्रोक्ति जीवितम् प्रथमोन्मेषः १:१०, पृष्ठ-५१

१५०- निरन्तर रसोद्गार गर्भसन्दर्भ निर्भरा : ।
गिर: कवीनां जीवन्ति न कथामात्रमाश्रिता : ।।
कुंतक : १:६

१५१- उक्ति वैचित्र्यं माधुर्यम्
- वामन- काव्यालंकार सूत्रवृत्ति, 'गुण विवेचन'

१५२- कवि व्यापार वक्रत्व प्रकारा: संभवन्ति षट् ।
प्रत्येकं बहवोभेदास्तेषां विच्छित्ति शोभिन: ।।
श्लोक संख्या-१८, पृष्ठ-२६१

१५३- डा० जगदीश गुप्त, कवितान्तर का तर्क, पृष्ठ-१६

१५४- डा० मथुरेशनंदन कुलश्रेष्ठ, टिल्यर्ड का वक्रोक्ति सिद्धान्त, पृष्ठ-१११

१५५- सं० जगदीश गुप्त, नयी कविता अंक-७ पृष्ठ-६

१५६- एको द्वौ बहवो वर्णाः बध्यमानाः पुनः पुनः ।
स्वल्पान्तरास्त्रिधा सोक्ता वर्णविन्यास वक्रता ।।
वक्रोक्ति जीवित-२:१, पृष्ठ-१६६

१५७- एतदेव वर्णविन्यास वक्रत्वं चिरन्तनेष्वनुप्रास इति प्रसिद्धम् ।
हिन्दी वक्रोक्ति जीवित, पृष्ठ-६६

१५८- नातिनिर्बन्धविहिता नाप्यपेशल भूषिता ।
पूर्वावृत्त परित्याग नूतनावर्तनोज्ज्वला ।।
वही : व०जी० २:४, पृष्ठ-१८४

१५९- तार सप्तक, सं० अज्ञेय, 'कापालिक' प्रभाकर माचवे, पृष्ठ-२१६

१६०- जगदीश गुप्त, शम्बिद्ध, पृष्ठ-४६

१६१- सुपां तिङां च व्युत्पत्तिं वाचां वांछत्यष्ठतिम् ।
भामह काव्यालंकार द्वितीय ।

१६२- एषा एव शब्दशक्तिमूला अनुरणन रूप व्यंग्यस्य पद ध्वनेर्विषयः ।
वक्रोक्ति जीवित-२:१२

१६३- लोकोत्तर तिरस्कार श्लाघ्योत्कर्षाभिधित्सया ।
वाच्यस्य सोच्यते कापि रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता ।।
वक्रोक्ति जीवित-२:६ पृष्ठ-१६२

१६४- धूमिल- संसद से सड़क तक, पृष्ठ-३६

१६५- सर्वेश्वर- कविताएँ-२ पृष्ठ-११३

१६६- रघुवीर सहाय, आत्महत्या के विरुद्ध, पृष्ठ-१७

१६७- वही- पृष्ठ-७६

१६८- केदारनाथ सिंह, तीसरा सप्तक, पृष्ठ-११४

१६९- केदारनाथ सिंह अग्रवाल, फूल नहीं रंग बोलते हैं ।

१७०- अलंकारोप संस्कार मनोहारि निबन्धन: ।
पर्यायास्तेन वैचित्र्यं परा पर्याय वक्रता ।।
वक्रोक्ति जीवित : २:१२,पृष्ठ-२०३

१७१- एव एव च शब्द शक्ति मूलानुरणन रूप व्यंग्यस्य पद ध्वनेर्विषय: ।
वक्रोक्ति जीवितम्- पृष्ठ-२११

१७२- ----- रूपकालंकार विन्यास: सर्वेषामेव पर्यायाणां शोभातिशय
कारित्वे नोप निबद्ध: ।
वक्रोक्ति जीवितम् -२:१२ पृष्ठ-२२१

१७३- अज्ञेय, पूर्वा- पृष्ठ-१५१

१७४- नरेश मेहता, संशय की एक रात, पृष्ठ-६

१७५- दिनकर सोनवलकर, लो से अरम्यता , पृष्ठ-३७

१७६- यन्मूला सरसोल्लेखा रूपकादिरलंकृति : ।
उपचार प्रधानासौ वक्रता काचिदुच्यते ।।
वक्रोक्ति जीवितम् २:१४ पृष्ठ-२२३

१७७- उपचारो नामात्यन्तं विशकलितयो: शब्दयो: सादृश्यातिशयमहिम्ना
भेद-प्रतीति स्थगन मात्रं ।
विश्वनाथ: साहित्य दर्पण, द्वितीय परिच्छेद ।

१७८- वक्रोक्ति जीवितम् २:१५ पृष्ठ-२३३

१७९- अज्ञेय : असाध्य वीणा आंगन के पार द्वार ।

१८०- विद्यानिवास मिश्र: रीति विज्ञान, पृष्ठ-१६६

१८१- मुक्तिबोध, चांद का मुंह टेढ़ा है, ब्रह्मराक्षस

१८२- बीस साल बाद। मेरे चेहरे में।वे आंखें वापस लौट आयी हैं। जिनसे मैंने
पहली बार जंगल देखा है। हरे रंग का एक ठोस सैलाब जिसमें सभी पेड़
डूब गये हैं। और जहां हर चेतावनी खतरे को टालने के बाद।एक हरी
आंख बनकर रह गयी है । धूमिल: संसद से सड़क तक-

१८३- धूमिल: संसद से सड़क तक ।

१८४- जगूड़ी : निजी संवाददाता द्वारा : नाटक जारी है ।

१८५- भारत भूषण अग्रवाल : ओ प्रस्तुत मन ।

१८६- सर्वेश्वर : काठ की घंटियां

१८७- धूमिल : संसद से सड़क तक

१८८- शमशेर : कुका भी नहीं मैं

१८९- जगूड़ी- बिल्कुल निजी संवाद दाता द्वारा, नाटक जारी है ।

१९०- मीठी कड़वी तीखी मीठी। कसक किरकिरी किन यादों की रड़कन ?।
एक कुछ नहीं नसे के झोंकों से ये। स्मृति के शीशे की तड़कन.
- अज्ञेय- धड़कन-धड़कन, कितनी नावों में कितनी बार ।

१९१- सर्वेश्वर- 'बांस का पुल, सांझ होते ही'

१९२- जगूड़ी, इस व्यवस्था में, नाटक जारी है ।

१९३- वही- निजी संवाददाता द्वारा

१९४- भवानीप्रसाद मिश्र, जल रहा हूं मैं, कितनी नावों में कितनी बार ।

१९५- यत्र संव्रियते वस्तु वैचित्र्यस्य विवक्षया ।
सर्वनामादिभिः कश्चित् सोक्ता संवृति वक्रता ।।
वक्रोक्तिजीवितम् २:१६

१९६- मैं चूमता हूं। तुम्हारा मस्तक। तुम्हारी भौंहें। तुम्हारी आंखें तुम्हारे
कपोल। तुम्हारे अधर। तुम्हारा चिबुक। तुम्हारा कण्ठ। तुम्हारा वक्ष।
तुम्हारे उरोज। तुम्हारी नाभि। तुम्हारा प्रजनन पुष्प ।
- सर्वेश्वर- जंगल का दर्द, पृष्ठ-१११

१९७- धर्मवीर भारती, दूसरा सप्तक : सं० अज्ञेय पृष्ठ-१८८

१९८- सर्वेश्वर-कविताएं-२ पृष्ठ-४४

१९९- रघुवीर सहाय- आत्महत्या के विरुद्ध, पृष्ठ-३०

२००- भिन्नयोर्लिङ्गयोर्यस्यां सामानाधिकरण्यतः ।
कापि शोभाभ्युदेत्येषा लिङ्गवैचित्र्य वक्रता ।।
वक्रोक्ति जीवितम् २:२१, पृष्ठ-२५३

kalpana's

२०१- है वसन्तवती। ढार के नभ पर तुम्हारे। फुंकी जो हेमन्त का शिर मार
लूट ली उसको मैं तुम्हारा गाय। शमशेर, हे वसन्तवती, पृष्ठ-६६

२०२- नरेश मेहता, समय का देवता, पृष्ठ-१३२
२०३- सुमन राजे, चौथा सप्तक, सं० अज्ञेय, पृष्ठ-१८६
२०४- सति लिंगान्तरे यत्र स्त्रीलिंगच प्रयुज्यते ।
शोभा निष्पत्त्ये यस्मान्नामैव स्त्रीति पेशलम् ।।
वक्रोक्ति जीवितम्-२:२२ पृष्ठ-२५५
२०५- तीसरा सप्तक, सं० अज्ञेय, सर्वेश्वर -आज पहली बार, पृष्ठ-३३५

२०६- कर्मादि संवृतिः पंच प्रस्तुतौचित्य चारवः ।
क्रिया वैचित्र्यवक्रत्व प्रकारास्त इमे स्मृताः ।।
व०जी० २:२५ पृष्ठ-२६०
२०७- दूसरा सप्तक, सं० अज्ञेय, शमशेर बूंद टपकी एक नभ से, पृष्ठ-९६
२०८- धर्मवीर भारती, गांव मेरी गोद में, पृष्ठ-१५५
२०९- श्रीकांत वर्मा, मायादर्पण : नकली कवियों की वसुन्धरा ।
२१०- कुंवर नारायण, अतीतबोध, आत्मजयी ।
२११- सुप तिंग वचन सम्बन्धैस्तथा कारक शक्तिभिः ।
कृत तद्धित समासैश्च द्योत्यो लक्ष्य क्रमः क्वचित् ।।
ध्वन्यालोक-३:१६
२१२- औचित्यान्तरतम्येन समयो रमणीयताम् ।
याति यत्र भवत्येषा काल वैचित्र्य वक्रता ।।
- वक्रोक्ति जीवितम्-२:२६ पृष्ठ-२७०
२१३- रघुवीर सहाय, आत्महत्या के विरुद्ध, पृष्ठ-४३
२१४- धूमिल : संसद से सड़क तक, पृष्ठ-१८

Lalpuzzo

२१५- परि पोषयितुं कांचिद् भंगीभणिति रम्यताम् ।
कारकाणां विपर्यास: सोक्ता कारक वक्रता ।।
- वक्रोक्ति जीवितम्, २:२८ पृष्ठ-२७४

२१६- धूमिल : संसद से सड़क तक, पृष्ठ-१०, ११, २७

२१७- धर्मवीर भारती, अंधायुग, पृष्ठ-५७

२१८- कुर्वन्ति काव्य वैचित्र्य विवक्षा पर तन्त्रिता : ।
यत्र संख्या विपर्यासं तां संख्या वक्रतां विदु: ।।
- वक्रोक्ति जीवितम् : २:२६ पृष्ठ-२७७

२१६- धूमिल : संसद से सड़क तक, पृष्ठ-१७

२२०- वही- पृष्ठ-२६, ३०

२२१- प्रत्ययता पर भावश्च विपर्यासेन योज्यते ।
यत्र विच्छित्तये गौणा ज्ञेया पुरुषा वक्रता ।।
- वक्रोक्ति जीवितम्, २:३० पृष्ठ-२८०

२२२- सर्वेश्वर : कविताएं ।

२२३- धूमिल : संसद से सड़क तक, पृष्ठ-४१, ६७

२२४- वक्रोक्ति जीवीतम्, २:३१ पृष्ठ-२८२

२२५- धूमिल: संसद से सड़क तक, पृष्ठ-५१

२२६- मेरी अंजुरी। धरती रहीं, अज्ञेय-पृष्ठ-२१

२२७- वक्रोक्ति जिवितम् : २:३२ पृष्ठ-२८३

२२८- डॉ० शमशेर, के वसन्तवती, पृष्ठ-६६

२२६- कीर्ति चौधरी, दूसरा सप्तक, पृष्ठ-११४

२३०- राजेन्द्र किशोर , चौथा सप्तक, पृष्ठ-२६८

२३१- फिर बही हरियर हवा, हरियर सितारे
फिर बही हरियर नदी, हरियर किनारे
+ + + +
चमकते पनियर किनारे

को गयी तरियर क्वा, उजिया पियारी
मधुर जल तरियर नदी, उनिपर किनारे,
श्रीराम वर्मा: वही चांदनी की कथा, पृष्ठ-२४२-४३

२३२- कुंतक : वक्रोक्ति जीवितम्, २:१८ पृष्ठ-२४५

२३३- तीसरा सप्तक, सं० अज्ञेय, पृष्ठ-१६१

२३४- वक्रोक्ति जीवितम् २:३३ पृष्ठ-२८५

२३५- धूमिल : संसद से सड़क तक, पृष्ठ-११

२३६- सर्वेश्वर: जंगल का दर्द, पृष्ठ-२६

२३७- भारत भूषण अग्रवाल, ओ अप्रस्तुत मन, पृष्ठ-१०

२३८- उदारस्व परिस्पन्द सुन्दरत्वेन वर्णनम् ।
वस्तुनो वक्रशब्दै गोचरत्वेन वक्रता ।।
व०जी० ३:१ पृष्ठ-२६३

२३९- वही- पृष्ठ-२६६

२४०- वाक्यस्य वक्रभावो न्यो भिद्यते य: सहस्त्रधा ।
यत्रालंकार वर्गो सौ सर्वो प्यन्तर्भविष्यति ।।
००व०जी०१:२० पृष्ठ-८७

२४१- ध्वन्यालोक : २:२५ पृष्ठ-५८४

२४२- यस्त्वलक्ष्यक्रम व्यंग्यो ध्वनि वर्ण पदादिषु ।
वाक्ये संघटनायान्च स प्रबन्धे पि दीप्यते ।।
- ध्वन्यालोक : ३:२ पृष्ठ-६६५

२४३- वन्यून नूतनोल्लेख रसालंकरणोज्वल: ।
बध्नाति वक्रतोद्भेदभंगिमुत्पादिताद् भुताम् ।।
- वक्रोक्ति जीवितम्, ४:८ पृष्ठ-५०३

२४४- नूतनोपाय निष्पन्न नयवर्त्मोपि देशिनाम् ।
महाकवि प्रबन्धानां सर्वेषामस्ति वक्रता ।।
वही- ४:२६ पृष्ठ-५४०

२४५- अन्यून नूतनोल्लेख रसालंकरणोज्वल: ।
बध्नाति वक्रतोद्भेद भंगी मुल्लासिताद् गुणाम् ।।

२४६- प्रधान वस्तु निष्पत्यै वस्त्वन्तर विचित्रता ।
यत्रोल्लसति सोल्लेखा सापरा स्य वक्रता ।।
- वक्रोक्ति जीवितम् ४:८,४:११ पृष्ठ-५०३,५१८

२४७- कुंवरनारायण : आत्मजयी , पृष्ठ-५

२४८- किन्तु देवि। यह राजनैतिकों की भाषा है। इसकी शब्दावली अलग है। इसमें उदात्त या उदात्त से। भावों के अभिव्यक्तिकरण को।समुचित शब्द नहीं होते ।
- दुष्यन्त कुमार, एक कंठ विषपायी, पृष्ठ-१२

२४९- दुष्यन्तकुमार, एक कंठ विषपायी, पृष्ठ-६५

२५०- डा० विनय, एक पुरुष और, पृ ष्ठ-१६

२५१- सुप-तिङ्ग वचन-सम्बन्धैस्तथा कारक शक्तिभि: ।
कृत-तद्धित-समासैश्च द्योत्यो लक्ष्यक्रम: क्वचित ।।
- ध्वन्यालोक : ३:१६

२५२- लक्ष्मीकांत वर्मा, नये प्रतिमान, पुराने निकष,पृष्ठ-३

२५३- यदप्यनूतनोल्लेखं वस्तु यत्र तदप्यलम् ।
उक्ति वैचित्र्य मात्रेण काष्ठां कामपिनीयते ।।
प्रतीयमानता यत्र वाक्यार्थस्य निबध्यते ।
वाच्य वाचक वृत्तिभ्यां व्यतिरिक्तस्य कस्यचित् ।
- वक्रोक्ति जीवितम्, १:३६,१:४० पृष्ठ-१२४-२५

२५४- भूमिका- अज्ञेय, दूसरा सप्तक,पृष्ठ-११

२५५- द्रष्टव्य : तार सप्तक भूमिका, पृष्ठ-२७५,२७६,२७७-२७८

२५६- कैलाश वाजपेयी : आधुनिक हिन्दी कविता में शिल्प , पृष्ठ-३११

२५७- मुक्तिबोध : कामायनी एक पुनर्विचार, पृष्ठ-५

२५८- मुक्तिबोध-वही- पृष्ठ-२

२५९- वही- पृष्ठ-७

२६०- वह रहस्यमय व्यक्ति। अब तक न पायी गयी मेरी अभिव्यक्ति है। पूर्ण अवस्था वह। निज संभावनाओं, निहित प्रभावों, प्रतिमाओं की। मेरे परिपूर्ण का आविर्भाव। हृदय में रिस रहे ज्ञान का तनाव वह। आत्मा की प्रत प्रतिभा ।।
- मुक्तिबोध : चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ-२६२

२६१- वही- पृष्ठ-१८

२६२- मुक्तिबोध : चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ-२१६

२६३- रमाकांत गुप्त, (सप्तक काव्य परम्परा) और चौथा सप्तक, पृष्ठ-६५

२६४- धूमिल- संसद से सड़क तक, पृष्ठ-६६

२६५- वही- पृष्ठ-५७

२६६- सकलदीप सिंह, निषोध, १६५

२६७- श्याम परमार- निषोध, पृष्ठ-६६

२६८- सं० डा० नगेन्द्रमोहन, विचार और लहू के बीच, पृष्ठ-१६४

२६९- कुमारेन्द्र-पारसनाथ सिंह, इतिहास का संवाद, पृष्ठ-१०८

२७०- वही- पृष्ठ-१०६

२७१- कुंवर नारायण : चक्रव्यूह, पृष्ठ-६६

२७२- राजेन्द्र किशोर, स्थितियां अनुभव और कविताएं ।

२७३- समवेत, अंक-१, सं० श्री आग्नेय, राजा दुबे

२७४- सौमित्रमोहन- निषोध, पृष्ठ-८४

२७५- वही- पृष्ठ-८६

२७६- चन्द्रकान्त देवताले : निषोध, पृष्ठ-४७-४८

२७७- धर्मवीर भारती : ठण्डा लोहा, पृष्ठ-५५

२७८- लक्ष्मीकान्त वर्मा : अतुकान्त, पृष्ठ-१०

२७९- तीसरा सप्तक, सं० अज्ञेय, पृष्ठ-१३२-३३

२८०- वही- पृष्ठ-१३३-३४

२८१- शमशेर, सं० सर्वेश्वर दयाल और मलयज, पृष्ठ-९२-९३

२८२- प्रयाग नारायण त्रिपाठी, समानान्तर लकीरें, तीसरा सप्तक, पृष्ठ-२०

२८३- निषेध : सं० जगदीश चतुर्वेदी, पृष्ठ-६६

२८४- वही- पृष्ठ-७६

२८५- समकालीन हिन्दी साहित्य- सं० विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, पृष्ठ-१९०

२८६- अज्ञेय - तारसप्तक, पृष्ठ-२७६-७७

२८७- शमशेर : कुछ कविताएं, पृष्ठ-६३

२८८- मलयज : नयी कविता, अंक-४ -पृष्ठ-६३

२८९- धूमिल : संसद से सड़क तक

२९०- विचार और लहू के बीच, डा० नरेन्द्र मोहन पृ०१६१

२९१- बल्देवप्रसाद मिश्र, सं० १०१७ जनभारती अंक-१ तथा सैयद शफीउद्दीन, ज्ञानोदय मई, १९५८, पृष्ठ-५४

२९२- ईश्वरचन्द्र, ज्ञानोदय, सितम्बर, १९६७ पृष्ठ-१२८

२९३- श्रीरमण : आयाम

२९४- ज्ञानोदय जुलाई १९६६, मैकलियांड, पृष्ठ-१३९

----

kalpana's